Chap-4

चतुर्थ अध्याय

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का विश्लेषणात्मक अध्ययन

चतुर्थ अध्याय

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का विश्लेषणात्मक अध्ययन

"कस्तूरी कुंडल बसै", के पश्चात् मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा का दूसरा खण्ड "गुड़िया भीतर गुड़िया" सन् 2008 में प्रकाशित होता है। "कस्तूरी कुंडल बसै" में मैत्रेयी की माता कस्तूरी की जीवनी और मैत्रेयी की आत्मकथा समांतर चलते हैं। "गुड़िया भीतर गुड़िया" अपने सही अर्थों में मैत्रेयी की आत्मकथा है। कस्तूरी के महिलामंगल आंदोलन को सरकार विफल कर देती है। महिलामंगल की कर्मचारियों को स्वास्थ्य विभाग में नियुक्त किया जाता है। उसके लिए कस्तूरी को प्रशिक्षण केन्द्र में जाकर प्रशिक्षण लेना पड़ता है। प्रशिक्षित होने के उपरांत वह पी.एच.सी. के जिन जिन केन्द्रों पर रहती है वहाँ चैन से रह नहीं पाती। उन केन्द्रों में दवाइयों और इंजेकशनों को लेकर जो धपले चलते थे। कस्तूरी को वे खटकते थे और इसलिए कस्तूरी भी डॉक्टरों और कंपाऊडरों के आँख की किरकरी बनी हुई थीं। मैत्रेयी माँ के सपना को रौंदती हुई वैवाहिक जीवन चुनकर स्वयं को सुरक्षित समझ रही थीं। परंतु थीं तो आखिर वह कस्तूरी की बेटी ही उसके भीतर नारी अस्मिता की जो आग थी। वह उसे एक सामान्य "गृहस्थन" कैसे रहने देती? अपने आचरण द्वारा वह कई बार पत्नी के मानसिक स्तर में दखल देने लगी थी। उसके भीतर कुछ तो था जो धीरे-धीरे विवाह संस्था से विरक्त कर रहा था। शायद उसके भीतर "माँ" ही थी जो परोक्षरूप से मैत्रेयी का रास्ता परिवर्तनकामी लोगों के पास ले गयी। मैत्रेयी को अपना लक्ष्य "कलम" में दिखाई देने लगता है। कलम के सहारे वह अपनी चेतना और आत्मा की आवाज को सुनने लगती है। मैत्रेयी के ही शब्दों में – "सुना था साहित्य व्यक्ति के लिए स्वतंत्रता देता है। हाँ। लिखकर ही तो मैं ने जाना कि न मैं धर्म के खिलाफ थी, न नैतिकता के विरुद्ध। मैं तो सदियों से

चली आ रही तथाकथित सामाजिक व्यवस्था से खुद को मुक्त कर रही थी।"[1] और उसका परिणाम है "गुड़िया भीतर गुड़िया"। "कस्तूरी कुंडल बसै" की भाँति यहाँ भी हम प्रथमतः "गुड़िया भीतर गुड़िया" के पाठ को संक्षेप में प्रस्तुत करेंगे। उसके पश्चात् प्रस्तुत रचना "गुड़िया भीतर गुड़िया" की वस्तुवादी दृष्टि से सम्यक् विवेचन और विश्लेषण होगा। "कस्तूरी कुंडल बसै" में जहाँ "9" अध्याय थे। वहाँ "गुड़िया भीतर गुड़िया" में "18" अध्याय है। यहाँ भी शीर्षक काव्यात्मक और प्रतीतात्मक दिए गए हैं, जिनमें अधिकांशतः कबीर साहित्य से है। अब क्रमशः इनका सार – संक्षेप प्रस्तुत होगा।

(1) काहे रे नलिनी तू कुम्हलानी

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का यह प्रथम अध्याय पृ.9 से 26 में उपन्यस्त हुआ है। अध्याय का शीर्षक ही काफी प्रतीकात्मक और संकेतात्मक है। डॉक्टर से विवाह करने के उपरांत पुष्पा रूपी नलिनी को तो प्रफुल्लित होना था। परंतु उसके भीतर की जो आग है वो उसे चैन नहीं लेने देती। डॉक्टर और मैत्रेयी दिल्ली आ जाते हैं। यहाँ उस स्थिति का निर्माण होता है, जो "अंधेरे बन्द कमरे" के "हरवंश" का होता है। डॉक्टर भी "हरवंश" की भाँति चाहते हैं कि मैत्रेयी मोर्डन बने पर दूसरी तरफ मैत्रेयी जब उस दिशा में कदम उठाती है तो डॉक्टर सशंकित होने लगते हैं। डॉक्टर के इन द्वन्दों से मैत्रेयी भी द्वन्दों की "वैतरणी" में डूबती उतराती है। पार्टी में डॉक्टर सिद्धार्थ के साथ नाचने को लेकर काफी बबाल होता है। डॉक्टर सिद्धार्थ के साथ मैत्रेयी के भावनात्मक लगाव को इंद्रियगोचर किया जा सकता है। "पुरूषस्य भाग्यं त्रिया चरित्रम्" जैसी उक्तियों से मैत्रेयी लहूलुहान होती है। सिद्धार्थ के विदेश जाने पर उत्पन्न रिक्तता को मैत्रेयी पी-एच.डी. के द्वारा भरना चाहती है परंतु, डॉ.रेखा अग्रवाल की "घरेलू औरत" वाली टिप्पणी से आहत होती है।[2] कई बार मैत्रेयी का

बड़बोलापन भी उसका दुश्मन बन जाता है । "लेड़ी विचलेंसी" की कविता मैत्रेयी में उत्साह भरती है । डॉ.रेखा अग्रवाल मैत्रेयी को पी-एच.डी. के लिए तो मना करती है । परंतु वह इतनी अनउदार भी नहीं है । वह मैत्रेयी को "लिंग्विस्टिक" में डिप्लोमा करने का परामर्श देती है । साक्षात्कार कोल भी आता है, परंतु डॉक्टर उस बात को छिपा ले जाते हैं । इस बात से मैत्रेयी बहुत आहत होती है । डॉक्टर का रवैया तो समझ में नहीं आता । एक तरफ "मेरी जान", "मेरी जान" कहकर मैत्रेयी को फुग्गा बना देते हैं और दूसरे ही क्षण उसमें से हवा निकाल देते हैं । नलिनी के कुम्हलाने का यही कारण है ।

(2) तेरा झूठा मीठा लागा

प्रस्तुत अध्याय 17 पृष्ठों में उपन्यस्त् हुआ है । इसमें वर्णित घटनाएँ कुछ तो पीछे की और कुछ बाद की हैं । अतः इसमें लेखिका ने जहाँ एक तरफ पूर्वदीप्ति के द्वारा पिछली घटनाओं को लिया है वहाँ इन्होंने अपनी कुछ कहानियों का ("रास" और "छुटकारा") हवाला दिया है । जो बाद में लिखी गई होंगी । इस प्रकार आत्मकथा होते हुए लेखिका ने "A to Z" वाली क्रमिक्रता को न रखते हुए औपन्यासिक शिल्प का प्रयोग किया है । प्रथम अध्याय में मैत्रेयी ने दिल्ली में अपने स्थिर होने की बात लिखी है । यहाँ पर उन्होंने वे अलीगढ़ से दिल्ली किस प्रकार आए उसका वर्णन किया है । एक स्थान पर पहली बेटी नम्रता का भी उल्लेख है । डॉक्टर का चयन अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान में हुआ था । अतः सर्वप्रथम उनको उस संस्था के बोयज़ होस्टेल में रहना पड़ा था । डॉ.सिद्धार्थ का पहला परिचय यहाँ होता है । जिनकी चर्चा हम प्रथम अध्याय में पढ़ चुके हैं । प्रथम अध्याय में जहाँ "अनपढ़" फिल्म का जिक्र था यहाँ "छलिया" फिल्म का उल्लेख मिलता है उसके बहाने विभाजन के समय की विभीषिकाओं का भी लेखिका ने वर्णन किया है । मनोवैज्ञानिक दृष्टया जिसे "एण्टीकल्चरल शॉक" (Anticultural Sock) कहते हैं । मैत्रेयी प्रथमतया उससें

पीड़ित लगती है। उसे दिल्ली की तुलना में अपना अलीगढ़ अच्छा लगता है। महानगरीय जीवन में व्याप्त अजनबीपन को भी लेखिका ने इंगित किया है। महानगरों में शहर तो बड़े होते है पर घर बड़े छोटे होते है। बोयज़ होस्टेल में डॉक्टर तथा मैत्रेयी का Stay अल्पकालीन था , बाद में रहने की व्यवस्था होते ही उन्हें अन्यत्र जाना था। शुरू-शुरू में मैत्रेयी को होस्टेल के वातावरण में अटपटापन लगता है, परंतु बाद में उसे छोड़ना भी उन्हें अच्छा नहीं लगता। इसे लेकर भी डॉक्टर फब्तियाँ कसते रहते हैं कि वह "नोस्टेलिजया" की शिकार है। अलीगढ़ आई थी तब अपने झाँसी के लिए रोती-गाती थी और अब दिल्ली पर अलीगढ़ को लेकर बिसुरती रहती है। डॉक्टर दिल्ली के अच्छे पोश एरिया में किराए का मकान ढूंढने की बहुत कोशिश करते हैं, इसे लेकर मकान मालिकों की मानसिकता और उनकी सकीर्णता और टुच्चापन का वर्णन भी लेखिका ने किया है। इसी संदर्भ में विभाजन के समय पाकिस्तान से आए हुए शरणार्थियों की बात डॉक्टर करते हैं कि वे वही शरणार्थी है जिन्होंने अपने पुरुषार्थ से अपने मकान खड़े कर लिए हैं। अतः मैत्रेयी को जहाँ उनमें टुच्चापन दिखता है। वहाँ डॉक्टर का रवैया थोड़ा संतुलित है और वे उनकी मानसिकता को समझने की चेष्टा करते है। बहुत कठिनाई के बाद एक मकान की बरसाती में उनको रहने का ठौर ठिकाना मिलता है।[3] मैत्रेयी अपनी सहेली कंचन को पत्र लिखती है। उसमें कई पुरानी स्मृतियाँ को ताजा करती है उसी संदर्भ में "दाई की संतो" का किस्सा आता है। यहाँ वही संतो है जिसने मैत्रेयी को "ढोला" सुनाया था, इसी "ढोला" का प्रयोग लेखिका ने अपनी "रास" कहानी में किया है। बाद में इसी रास कहानी के नाटयरूप का श्री राम सेंटर पर मंचन हुआ था और जिसके पाँच शो हुए थे। कंचन ने संतो का कुछ पता दिया था पर लेखिका उसे ढूंढने के लिए कोई खास प्रयत्न नहीं करती है। इस विषय-वस्तु पर लेखिका की "छुटकारा" कहानी के ताने-बाने कसे गए हैं।

कहानी का लेखन उस अपराधबोध से मुक्त होने का था जो नहीं हो सका। डॉक्टर अलीगढ़ से दिल्ली आते है वह स्थिति भी "अलग-अलग वैतरणी" में वर्णित वेदना से तुलनीय है। जिसमें कहा गया है कि गाँव से पढ़े-लिखे लोग शहरों में चले जाते हैं। गाँव का जो कुछ भी "सर्वोत्कृष्ठ" है वह शहरों में चला जाता है। गाँव में कोई नहीं रहना चाहता। केवल वह ही रह जाते है जो, अन्यत्र जाने के लिए सक्षम नहीं है।[4]

(3) जो पै पिय के मन नाहिं भायी

"जो पै पिय के मन नाहिं भायी" पृष्ठ 43 से 52 में उपन्यस्त् हुआ है। प्रस्तुत अध्याय में भी पूर्वदीप्ति का प्रयोग हुआ है। डॉक्टर साहब और मैत्रेयी दिल्ली आ गए हैं। अपना ठौर ठिकाना बना लिया है। मैत्रेयी पुनः गर्भवती हुई है। डॉक्टर साहब अपने पढ़े-लिखे दोस्तों और उनकी कंपनी के लिए प्रेरित करते हैं पर मैत्रेयी जब लोगों से फ्रीली मिलती जुलती है तब उनका "मध्यकालीन पुरूष" फन उठाता है। डॉक्टर मैत्रेयी को चाहते भी हैं और उल्ट वार भी करते हैं। यह "मारो और प्यार करो" वाली उल्टनीति मैत्रेयी की समझ से परे हैं। प्रस्तुत अध्याय में हम देखते है कि मैत्रेयी अपने वैवाहिक जीवन को लेकर अधिक संतुष्ट नहीं है क्योंकि "पुरूष शासित" सेविका नारी मैत्रेयी का आदर्श कभी नहीं रही। मैत्रेयी स्त्री स्वातंत्र्य में मानती है। उसकी स्मृति में "आम्रपाली की कथा" गूँजती है जो इनके पाली के अध्यापक भगवानदास माहौर ने सुनायी थी। दूसरी ओर डॉक्टर साहब आम्रपाली को "वेश्या" बताकर उसे अपमानित करते हैं। मैत्रेयी के इस बैचेनी का कारण उसका वह "थ्रस्ट" भी है जो किसी तरह राह नहीं पा रहा था। अतः मेडिकल चेकअप के लिए "चाँदनी चौक" जाते समय "बहादुरशाह जफर मार्ग" पर "टाइम्स ऑफ इंडिया" के कार्यालय को देखकर मैत्रेयी की आँखोमें एक चमक सी आ जाती है। मैत्रेयी में

एक जन्मजात विद्रोहभाव है। फिल्म दिग्दर्शक या निर्माता महेशभट्ट के शब्दों में —

"All Art is based on the spirit and emotion of dissent"[5]

अर्थात् प्रत्येक कला असहमति की भावना पर आधृत होती है। यहाँ पर प्रकारान्तर से "पोप सिंगर" Lady gaga का कथन भी स्मृतिगोचर हो रहा है –

"I am an artist.....I'm married to my loneliness."[6]

अर्थात् एकांकीपन ही मेरी सहचरी है। ऐसा लगता है कि कलाकार मात्र अकेलेपन के अभिशाप ढ़ोने के लिए अभिशप्त होता है। मैत्रेयी यदि सामान्य घरेलू प्रकार की स्त्री होती तो मारे खुशी के फूली न समाती, परंतु एक पढ़ा-लिखा डॉक्टर पति और महानगर में निवास होते हुए मैत्रेयी "संतप्त" है। तड़प रही है, क्योंकि उसके भीतर जो लिखने की तड़प है, वह उसे बेचैन कर देती है। इस प्रकार मैत्रेयी के वैवाहिक जीवन और उसकी लेखकीय जिजिविषा के बीच का द्वंद यहाँ अभिव्यक्त हुआ है। मैत्रेयी ब्राहयतः आधुनिक होने का प्रयत्न भी करती है और उसमें दो एक बार हास्यास्पद स्थितियों से गुजरने के हादसों से भी दो-चार होना पड़ता है।

(4) एक सुहागिन जगत पियारी

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का चतुर्थ अध्याय "एक सुहागिन जगत पियारी" कुल 23 पृष्ठों मे उपन्यस्त् हुआ है। (पृ. 53 - 76) इस अध्याय की एक महत्वपूर्ण घटना "इल्माना – अहमद" का प्रवेश है। इल्माना – अहमद ने अलीगढ़ युनिवर्सिटी से "बोटनी" में मास्टर डिग्री हासिल की थी। सौन्दर्य और प्रतिभा का मनिकांचनयोग हमें इल्माना में दृष्टिगोचर होता है। उनकी तुलना में उनके पति डॉक्टर अहमद उतने प्रिय दर्शनि नहीं है। गुजराती कहावत –

"कागड़ो दैतरूं लई गयो" का स्मरण मस्तिष्क में होना स्वभाविक है। इल्माना के द्वारा हमें मुस्लिम औरतों, पढ़ी-लिखी और शिक्षित की भी स्थिति का ज्ञान होता है। इस अध्याय में "सती शाण्डिली" की कथा भी आती है। बिहारी के दोहे और "बाण भट्ट की आत्मकथा" का जिक्र भी मिलता है। जिससे मैत्रेयी की शैक्षिक पृष्ठभूमि भी प्रकट होती है। इस अध्याय में "नैनसी" का भी परिचय मिलता है जो शारीरिक अत्याचार की शिकार होती है। आजकल जिस Domestic Violence का जिक्र हो रहा है वह भारतीय सामाजिक परम्परा में स्त्रियों की नियति सा बन गया है। "मिसिज अरोरा" का पति उसके साथ "अननैचुरल सेक्स" अर्थात् "Anal Coitus" (गुदा मैथुन) करता है। उसकी प्राच्य और पाश्चात्य की चर्चा उभय के कामशास्त्र सबंधी ग्रंथो में मिलता है।[7] एक यौनखेल (Love game) के रूप में उसका प्रयोग उतना आपत्तिजनक नहीं है।[8] पर इस तथ्य को ध्यानार्ह रखना चाहिए कि इस प्रकार का मैथुन उभय की सम्मति से ही होना चाहिए अन्यथा "जन्नत जहन्नुम" में बदल सकता है। पूरा का पूरा "कुम्भी पाक"। इल्माना का आकर्षक व्यक्तित्व कई डोक्टरों को लट्टू बना देता है। उसके कारण अनेक सहकर्मी डॉक्टरनियों को भी ईष्या होने लगती है। शुरू शुरू में इल्माना का स्वागत जोशोखरोश से होता है। परतुं बाद में "छीं छीं अंगूर खट्टे है" न्याय से लोकबाग उसकी पीठ के पीछे बुराई करते हैं। मैत्रेयी के पति डॉक्टर साहब भी अपनी मैत्रेयी पर परोक्ष दबाव डालते हैं कि वह उसकी संगत न रखे, परंतु मैत्रेयी को इल्माना का व्यक्तित्व न केवल आकर्षित करता है बल्कि वह एक चिंगारी का काम करता है जो मैत्रेयी के भीतर की रचनात्मक अग्नि को प्रज्वलित करती है। उसके कारण ही मैत्रेयी में "नारी अस्मिता" के भाव कुलबुलाने लगते हैं और इसी सबब मैत्रेयी में इल्माना के प्रति एक कृतज्ञता का भाव भी पैदा होता है।[9] यहाँ एक और नारी जीवन का

अंतर्विरोध भी प्रत्यक्ष हुआ है कि लोक-बाग नौकरी पेशा महिलाओं को तो कामकाजी कहते हैं, परंतु घर परिवार में खपने-खटनेवाली महिला के श्रम को फालतू समझ लिया जाता है।[10] वस्तुतः कामकाजी महिलाओं के श्रम के समान ही घरेलू स्त्रियों के श्रम को समझना चाहिए, दूसरे भारतीय परिवेश में कामकाजी महिलाओं पर जो दोहरा बोझ पड़ता है वह भी विचारनीय समस्या है।[11]

(5) जियरा फिरे उदास

पंचम अध्याय "जियरा फिरे उदास" कुल 14 पृष्ठों (पृ. 77 – 92) में उपन्यस्त् हुआ है। इस अध्याय में हमें समकालीन भारतीय इतिहास के कुछ परिदृश्य उपलब्ध होते हैं। इस दृष्टि से इसमें निरूपित काल सन् 1971 से सन् 1977 तक है। 1971 के बांग्लादेश वाले युद्ध से हिंदुओं में उमंग उत्साह की लहरें दौड़ने लगती हैं, परंतु "एम्स" के परिसर में पूर्व पाकिस्तान से जुड़े मुस्लिम परिवारों में चिंता का माहौल देखा जाता हैं। वे लोग अपने पूर्व पाकिस्तान में स्थित परिवारों के लिए चिंतित दिखते है। यहाँ एक मिथ टूटता है कि युद्ध हंमेशा विधर्मियो में होता है, पूर्व पाकिस्तान और पश्चिम पाकिस्तान इस्लामपरस्त देश है। वहाँ के 95% लोगो का मज़हब इस्लाम है। फिर भी यह युद्ध हो रहा है। यहाँ साबित हो जाता है कि मज़हब से भी ज्यादा पकड़ भाषा की होती है।[12] 1971 का यह युद्ध जो पूर्व पाकिस्तान को बांग्लादेश में बदल देता है, समकालीन इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है। यह युद्ध बंगबंधु "शेख मजुर्बीर रहेमान" अपने "बंगबंधुओं" की अस्मिता के लिए लड़ते हैं। यह युद्ध तानाशाह विरूद्ध लोकतंत्र का है, यह युद्ध उर्दू बनाम बंग्ला का है। चारों तरफ "अमार सोनार बंग्ला" के स्वर गूंजित – अनुगूंजित होते हैं। इस युद्ध में अमरीका की परवाह किए बिना श्रीमती इंदिरा गांधी खुलकर बंगबंधु का साथ

देती है। भारतीय सैनिक वहाँ की जनवाहिनीयों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ता है। इसके कारण भारत में भी युद्ध के बादल मंडराने लगते हैं। महानगरों तथा औद्योगिक नगरों में अंधारपट छा जाता है। सायरनों की ध्वनि से लोग अपने घरों में दुबककर बैठ जाते हैं। इस युद्ध के कारण एम्स के परिसर में शुरू-शुरू में हिंदू-मुस्लिम एकता की भावना दृष्टिगोचर होती है, परंतु जैसे जैसे युद्ध की भयावहता गहराने लगती है। यह युद्ध पश्चिम पाकिस्तान और बांग्लादेश का नहीं, भारत और पाकिस्तान का युद्ध हो जाता है। युद्ध के कारण सामान्य (Normal) शिक्षित लोगों तक में सांप्रदायिक भावनाएँ भड़कती हैं। एम्स के परिसर में रात्रि के समय भ्रमण के लिए वोलेंटियर की नियुक्तियाँ होती हैं तब डॉक्टर अहमद और डॉक्टर रिज़वी को उनमें शामिल नहीं किया जाता है।[13] परिसर की औरतें भी इल्माना और कैसर से अंतर रखने लगती हैं। हिंदू-मुस्लिम से अविश्वसनीयता का वातावरण पैदा होता है। इस युद्ध में अमेरिका पाकिस्तान के साथ था। भारत को रूस की सहानुभूति प्राप्त थी। तत्कालीन अमरीकी प्रेसिडन्ट "निक्सन" का भी उल्लेख यहाँ हुआ है।[14] प्रेसिडन्ट निक्सन श्रीमति इंदिरा गांधी के संदर्भ में अंटसंट निवेदन भी देते हैं। परंतु इस युद्ध के कारण श्रीमती इंदिरागांधी की प्रतिष्ठा न केवल भारत में अपितु बाहर के देशों (अमेरिका छोड़कर) बढ़ती है। उसे एक "लौह महिला" (Iron Lady) का बिरूद मिलता है। बहुतों को स्मरण होगा कि उस समय संसद में "जनसंघ" के सासंद वाजपेयी ने कहा था कि इस संसद भवन में एक ही पुरुष है और वह है इंदिरागांधी, परंतु बांग्लादेश के स्थापित हो जाने के बाद इंदिरा के संदर्भ में लोगों का मोहभंग होने लगता है। इंदिरा गांधी एक कट्टर शासक के रूप में उभरकर आती है। "मीसा" का कानून और परिवार नियोजन संबधी ज्यादतियों के कारण माता पुत्र दोनों के संदर्भ में भारतीय जनता में बुरेभाव उत्पन्न होते हैं। आपातकालीन स्थिति के कारण देश के कई नेता

जयप्रकाशनारायण, मोरारजी आदि जेलों में ठूस दिए जाते हैं । आपातकालीन स्थिति का विरोध हिंदी के स्वनाम धन्य लेखक फणीश्वरनाथ रेणु भी करते हैं । और उसके कारण उन्हें जेल यात्रा भी करनी पड़ती है । रेणु को "एम्स" परिसर के बहुत से लोग केवल "तीसरी कसम" कहानी के कारण ही जानते है क्योंकि उस पर फिल्म बनी थीं । रेणु के आंचलिक उपन्यास "मैला आंचल" के कारण मैत्रेयी उनकी परम भक्त थीं । "मैला आंचल" तथा राजेन्द्र अवस्थी (जंगल के फूल के लेखक) का उल्लेख भी प्रस्तुत अध्याय में हुआ है । आपातकालीन स्थिति (इंमरजन्सी) का भी यथार्थ वर्णन लेखिका ने किया है । सन 1977 में रेणु का भी निधन हो जाता है । रेणु के निधन पर मैत्रेयी दुःख प्रकट करती है ।[15] बांग्लादेश के युद्ध के कारण भारतीय समाज में जो विषाक्त वातावरण निर्मित होता है उसके कारण मैत्रेयी इल्माना से नजरें चुराने लगती हैं । परंतु वही इल्माना मैत्रेयी की बच्ची को एक बार संकट स्थिति से बचा लेती है । इस प्रसंग के कारण फिर से उनका मेल-जोल कायम हो जाता है । 1977 की इंमरजन्सी के कारण इंदिरा गांधी एक क्रूर और बर्बर शासक के रूप में उभरकर आती है । जिसके दुष्परिणाम भी उसे भुगतने पड़ते हैं । संक्षेप में एम्स परिसर का वर्णन तत्कालीन घटनाओं के संदर्भ में देखने को मिलता है ।

(6) धिय सबै कुल खोयो

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का षष्ठ अध्याय "धिय सबै कुल खोयो" लगभग 50 पृष्ठों का (92 से 129) सुदीर्घ अध्याय है । इसमें मैत्रेयी ने पुनः पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है । हालाँकि उसे तीन बेटियाँ हो गई हैं – नम्रता, मोहिता, सुजाता । लड़कियाँ भी बड़ी हो गई हैं । तीनों लड़कियों ने डाक्टरी पास कर ली है । तीनों दामाद डॉक्टर है । नम्रता के तो एक लड़की भी हो गई है – वासवदत्ता । माता की सहकार्यकर गौरा ने गाँव में (सिर्कुरा) एक धार्मिक

कार्यक्रम रखा था। उसमें वह मैत्रेयी के परिवार को आमंत्रित करती है। वहाँ पर प्रसंग सहचयन की टेक्निक का प्रयोग करते हुए मैत्रेयी पूर्वदीप्ति के द्वारा अपने आर्यसमाजी गुरूकुल की शिक्षा-दीक्षा के तमाम अनुभवों को बड़ी ही यथार्थशैली में वर्णन करती है। यहाँ पुनः यह कहने को मन होता है कि "कस्तूरी कुंडल बसै" और "गुड़िया भीतर गुड़िया" वस्तुगत दृष्टि से आत्मकथाएँ है पर मैत्रेयी का उपन्यासकार हर जगह पर हावी रहा है और उन्होंने अपनी ये आत्मकथाएँ आत्मकथा की पारंपारिक शैली (कालक्रमिकता) को न ग्रहण करते हुए औपन्यासिक शिल्प को लिया है। अतः कोई चाहे तो इन रचनाओं को "औपन्यासिक आत्मकथा" कह सकता है। यहाँ भी मैत्रेयी ने कालक्रमिकता की उपेक्षा की है। प्रथमतः सोनपाल पटवारी के नम्बरदार को सिर्कुरा के प्रति सचेत करता है। वह कहता है कि आपकी ये प्रगतिवादी विचार एक तरफा है। आप लड़कों की शिक्षा का प्रबंध तो करते है, परंतु लड़कियों की शिक्षा पर आपने कभी विचार नहीं किया।[16] सोनपाल पटवारी ने अपनी लड़की निर्मला को आर्यसमाजी गुरूकुल में भेजा था। पटवारी की इस बात से प्रेरित होकर नंबरदार अपनी पुत्री सुशीला को बालिकाओं के गुरूकुल में भेजते हैं और इस प्रकार एक नयी लीक को चलाते हैं। गुरूकुल से पढ़-लिखकर आई सुशीला के वाणी-व्यवहार से गाँववाले अभिभूत हो जाते हैं और उनके मन में "स्त्री शिक्षा" को लेकर वैचारिक आंदोलन शुरू होते हैं। कस्तूरी नंबरदार से काफी प्रभावित थी। अतः उनके कहने पर वह अपनी बेटी मैत्रेयी को भी बालिकाओं के गुरूकुल में भेजती हैं। मैत्रेयी की प्राथमिक शिक्षा गुरूकुल के कठोर अनुशासन में संपादित होती है। मैत्रेयी का यज्ञोपवित भी होता है।[17] यहाँ पर आर्यसमाजी संस्थाओं के कुछ अंतर्विरोध भी सामने आते हैं। वेद और प्राचीनता के नाम पर चलानेवाले दंभ और ढकोसलों का पर्दाफाश भी मैत्रेयी यहाँ करती है। यह सब स्मृतियात्रा द्वारा घटित होता है।

प्रस्तुत अध्याय में एक साथ कई प्रसंगों और मुद्दों की चर्चा हुई है। पूर्वदीप्ति के द्वारा जहाँ एकतरफ स्वाधीनता पूर्व की स्थितियों का गुरुकुल पध्धतिका उल्लेख हुआ है। वहाँ आज़ादी के बाद के आये कुछ परिवर्तनों को भी रेखांकित किया गया है। भारत-पाकिस्तान विभाजन की घटना को भी लिया है।[18] ध्यान रहें इसके पूर्व उसके पूर्ववर्ती अध्यायों में 1971 के बांग्लादेश युद्ध को लिया गया है। इस प्रकार अधोमुखी कथा प्रवाह की औपन्यासिक टेक्निक यहाँ प्रयुक्त हुई है। मैत्रेयी के तीन – तीन बेटियाँ हो गयी हैं और साथ ही साथ "इदन्नमम", "चाक" इत्यादि उपन्यास और "चिन्हार" कहानी संग्रह के प्रकाशित होने के भी उल्लेख यहाँ हैं।[19] कस्तूरी की यह प्रबल इच्छा थी कि उसकी पुत्री मैत्रेयी सचमुच में "पौराणिक मैत्रेयी" के नाम को सार्थक करते हुए किसी ऊँचे प्रशासनिक पद पर पहुँचे। उसकी बेटी उससे भी बड़ी अफसर बने और कोई "Power and Postion" वाला पद हासिल करे; मैत्रेयी कस्तूरी की इस इच्छा की पूर्ति तो नही कर सकती परंतु एक-दूसरे क्षेत्र में (साहित्य के क्षेत्र) में विजयपताका फहराते हुए कई कीर्तिमान स्थापित करती है।

कस्तूरी और मैत्रेयी सपरिवार जब गौरा के आमंत्रण सिर्कुरा पहुँचते हैं तो उन्हें ग्रामीण सांस्कृतिक ग्राम पंचायत (खाप पंचायत) के कटु अनुभव होते हैं। गाँव के लोग बेटी को जन्म देनेवाली कस्तूरी की निंदा तो करते ही हैं उसकी बेटी मैत्रेयी ने भी तीन बेटियों को जन्म देकर बेचारे (?) डॉक्टर साहब को निरवंशिया बना दिया है ऐसा कहते हुए उसे बहुत लांक्षित करते हैं और दामाद के साथ जो नाइंसाफी हुई है उसकी भरपाई करने की जिम्मेदारी लेते हुए किसी दूसरी कन्या के साथ के विवाह तक की तत्परता बताते हैं। यहाँ पर स्वाधीनता के बाद का यह अंतर्विरोध भी सामने आया है कि जहाँ आज़ादी के बाद गाँव में अनेक प्रकार के परिवर्तन आए हैं। खेती-बाड़ी में नए तरीके आए हैं

। Latest Technology का उपयोग हो रहा है। वहाँ साथ ही साथ उनकी पुरानी सोच में नारी विषयक सोच में कोई बदलाव नहीं आया है। आज भी गाँव में उस स्त्री को "बाँझ" ही कहा जाता है जिसने किसी पुत्र का प्रसव न किया हो फिर भले ही उसे संतति के नाम पर दो-तीन लड़कियाँ हों। गाँववालों के हिसाब से तो कस्तूरी भी बाँझ थी, मैत्रेयी भी बाँझ है। हमारी इस पारंपरिक सोच पर धार्मिक विधि-विधानों के समय होनेवाली आरतियों का भी प्रभाव होता है। उदाहरणतया - गणेश चतुर्थी के अवसर पर होनेवाली गणेश वंदना में कहा गया है – "अंधे को आँख दे, कोढ़िन को काया, बांझिन को पुत्र दे, निर्धन को माया।" अर्थात् यहाँ भी बांझिन को पुत्र देने की बात कही गयी है। अन्यथा "बांझिन को संतति" भी कह सकते थे। पर यह पारंपरिक सोच है कि स्त्री को तब तक बाँझ समझा जाता है जब तक वह किसी "कुलदीपक" को जन्म न दे। गाँव के लोगों के मतानुसार डॉक्टर को चाहिए कि इस बाँझ-परम्परा को उन्हें तिलांजली देते हुए, अपने वंश को चलाने के लिए किसी दूसरी लड़की से विवाह कर लेना चाहिए।[20]

यह तो डॉक्टर की समझदारी और शिक्षा थी जो वे इन अनपढ़, गँवार, खाप-पंचायतों के मुखिया के प्रभाव में नहीं आए। क्योंकि उनका मेडिकल सायन्स का ज्ञान कहता हैं कि पुत्र या पुत्री की गर्भस्थिति में स्त्री कहीं बीच में नहीं आती वह पूर्णरूपेण पुरूष पर ही निर्भर है। अभिप्राय यह कि किसी स्त्री को यदि पुत्रियां ही पुत्रियां होती हैं तो उसमें वह स्त्री जिम्मेदार नहीं होती। बल्कि पुरूष ही उत्तरदायी होता है तो यदि "बाँझ" कहना हो तो पुरूष को कहना चाहिए ।

यहाँ इस तथ्य को भी रेखांकित करना चाहिए कि हमारे यहाँ धर्म, रूढ़ि और परम्परा के नाम पर कई बार अनुपयुक्त ही नही अनैतिक कार्य होते हैं। अभी सद्य ही प्रदर्शित हुई "रिवाज" नामक फिल्म में यह बताया गया है कि

हमारे यहाँ बीडर के एक गाँव में ऐसा रिवाज है कि परिवार की प्रथम पुत्री अविवाहित रहती है। उससे "जिस्म-फरोशी" का काम करवाया जाता है जिससे उस परिवार विशेष की आर्थिक स्थिति में इजाफा हो। यह अनैतिक कार्य धर्म-रूढ़ि परम्परा के नाम पर होता है। फिल्म में यह बताया गया है कि ऐसी ही एक लड़की शहर के एक लड़के को प्रेम करने लगती है। वह लड़का भी उसे जी जान से चाहता है और बिना दान – दहेज के उससे विवाह करने को भी उद्यत है, परंतु गाँव के लोग उसमें तरह – तरह के अड़गे लगाते हैं।[21]

इसमें कई बार यह भी देखा गया है कि कुछ न्यस्तहित-वाले लोग इन मुददों में अधिक दिलचस्पी दिखाते हैं। "सिर्कुरा" वाले प्रसंग में भी कई लोग मैत्रेयी को बाँझ ठहराकर अपने अपने स्वार्थ की रोटियाँ सेंकना चाहते थे।

प्रस्तुत अध्याय की एक अहम और दु:खद घटना यह है कि ब्रेनहेमरेज से कस्तूरी का निधन हो जाता है। सुखद बात यह है कि उस समय कस्तूरी अपने डॉक्टर दामाद सुभाष के साथ थी। यहाँ हमें कस्तूरी की तीन पीढ़ियों की कथा मिलती है। कस्तूरी मैत्रेयी – मैत्रेयी की बेटियाँ। इदन्नमम उपन्यास की मंदाकिनी की तीन पीढ़ियों की कहानी इससे तुलनीय है। कस्तूरी की मृत्यु के उपरांत मैत्रेयी का जमीन-जायदाद हासिल करने के लिए जो प्रयास करती है यह उसकी बेटियों को भी अखरता है। उन्हें उसमें माँ की कठोरता लगती है। परंतु मैत्रेयी को डर था कि कहीं उसकी इस स्थिति का लाभ लेते हुए उसकी जमीन-जायदाद को मामा के लड़के हथिया न लें। अत: मैत्रेयी के इस कार्य को अमानवीयता या कठोरता के रूप में नहीं लेना चाहिए। मैत्रेयी का यह कथन बड़ा ही सूचक है – "हमारे यहाँ मतलब कि इस कुल में मृत्यु का दु:ख मनाने के लिए रोने और शोक करने की मोहलत नहीं।"[22]

(7) तृषावंत जो होयगा

"तृषावंत जो होयगा....." अध्याय लगभग 12 पृष्ठों में (पृ. 124-140) उपन्यस्त् हुआ है। यहाँ भी मैत्रेयी आत्मकथा की कालक्रमिक पद्धति का अनुसरण न करके औपन्यासिक कथानक पद्धति पूर्वदीप्ति का प्रयोग करती है। बल्कि यहाँ तो पूर्वदीप्ति में भी पूर्वदीप्ति मिलती है। डॉक्टर साहब से विवाद के उपरांत मैत्रेयी का रचनाकार एक तरह से मर-सा गया था। कभी कभार अपने हृदय के आंतरिक उद्‌गारों को, रोमेंटिक भावनाओं को वह काव्यरूप देती थी, बच्चियाँ जब छोटी थी तब उनके स्कूल-कोलेज के मेगेज़िनों के लिए भी मैत्रेयी ने कुछ कविताएँ और कहानियाँ लिखी है, परंतु बाद में नम्रता के आग्रह पर मैत्रेयी पुनः लिखने के लिए अपना मन बनाती है। उसके लिए वह डॉक्टर साहब के साथ कई प्रकाशन गृहों के दफ्तरों की खाक भी छानती है। यहाँ पर साहित्यिक जगत का एक बड़ा ही विकृत और भौंडारूप सामने आता है कि जब कोई लेखिका अपनी रचनाओं के प्रकाशन हेतु कहीं जाती है तो पुरूष साहित्यकारों के लिए वह उपभोग की एक सामग्री होती है। वे ज्यादात्तर उसी रूप में उसको लेते हैं और यदि किसी महिला के पति डोक्टर या किसी उच्चपद पर होते हैं तो उनके उस पद का अपने हक में कैसे प्रयोग किया जाए यहीं उनके लिए विचारणीय मुद्‌दा बन जाता है। मैत्रेयी चाहती थी कि उसकी रचनाएँ प्रकाशित हों। डॉ. साहब उसके लिए कुछ प्रयत्न भी करते हैं। अपनी अर्थराशि लगाकर वह मैत्रेयी का एक कविता संग्रह – "लकीरें" प्रकाशित करवाते है। परंतु इस प्रकार से कविता संग्रह के छपने में केवल छपाश की एक संतुष्टिभर होती है। डॉक्टर साहब कहते हैं कि यह संग्रह उन्होंने अपने एक मित्र के प्रयास से जहाँ आमंत्रण पत्र कार्ड इत्यादि छपते है, वहाँ से प्रकाशित करवाया हैं। उनके इस कथन को नाटकीय वक्रोति "Dramatic Irony" कह सकते हैं।[23] क्योंकि डॉक्टर साहब को ज्ञात नहीं है कि इस प्रकार से कविता-संग्रह का छपना न छपने के बराबर है। क्योंकि उसकी प्रतियाँ केवल जान-

पहचानवाले कुछ लोगों तक जाती हैं और साहित्यिक तबक्कों में वह पुस्तक अचर्चित, असमीक्षित रह जाती है।

इस प्रकार की रोमंटिक कविताओं से स्वयं मैत्रेयी का मन उचट जाता है। उसके पास ग्रामीण-जीवन के जो अनुभव हैं, उसको लेकर वह लिख सकती है। परतुं वहाँ पर मैत्रेयी के सामने यह दुविधा है कि उसके जीवन के कुछ ऐसे पक्ष उद्घाटित होंगे। जिनसे डॉक्टरसाहब की इज्जत को बँटा लग सकता है या उनके मन में अपनी पत्नि की हीन पृष्ठभूमि की "अवधारणा" बन सकती है। यहाँ पर पूर्वदीप्ति के रूप में "रामश्रीचाची" की कथा आती है। रामश्रीचाची एक ममतामयी औरत है। वह सरदारखाँ के बच्चों को पालती है।[24] परंतु इसी औरत पर उसके पति और देवर की हत्या का आरोप लगता है। यह ग्रामीण जीवन का एक बड़ा ही घृणित पक्ष है। वे "रामश्रीचाची" का यौन शोषण किस प्रकार करते हैं, यह यहाँ निरूपित हुआ है और स्त्री जब बलात्कृत होती है तो हर दृष्टि से उसी को दोषी करार दिया जाता है। "कुल्टा" और "वेश्या" वही कहलाती है। इन प्रसंगों का जिक्र "इदन्नमम" आदि उपन्यासों में लेखिका ने कहीं-न-कहीं किया है।

(8) मोरा मन मतबारा

"मोरा मन मतबारा" अध्याय 18, 19 पृष्ठों में (पृ. 142 - 161) उपन्यस्त् हुआ है। इस अध्याय में लेखिका अपना मन बना लेती है कि उसे गद्य पर अपनी लेखनी चलानी चाहिए[25] इसमें लेखिका ने यह भी उल्लेख किया है कि उनका गाँव "करबन" नदी के किनारे है। उन्हीं दिनों मे (15 July, 1989) साप्ताहिक हिन्दुस्तान में एक प्रेमकहानी प्रतियोगिता का विज्ञापन प्रकाशित हुआ था। मैत्रेयी अपने प्रेम-अनुभवों के आधार पर एक कहानी लिखती है। मैत्रेयी जब ११ साल की थी और स्कूल में पढ़ने जाती थी, उन दिनों की घटना है रवीन्द्रनारायणसिंह चौहाण चकबंदी के लिए नायब तहसीलदार के रूप में नियुक्त हुए थे। उनके

पास एक "रिले साईकिल" थी। उन दिनों में किसी के पास रिले साईकिल होना भी बहुत बड़ी बात समझी जाती थी। बालिका मैत्रेयी को तहसीलदार साहब अच्छे लगते हैं और तहसीलदार भी इस बालिका को पसंद करते हैं। अपने जीवन का पहला प्रेमपत्र वो तहसीलदार साहब को लिखती है, जिसमे उसने लिखा था कि उसने उनका खुशबूदार रूमाल चुरा लिया है और एक दिन वह उनके "रिले साईकल" पर भी बैठेगी। मैत्रेयी का यह प्रेमपत्र गाँव में काफी चर्चित रहता है। तहसीलदार साहब तक मैत्रेयी से कहते हैं कि "मुन्नी रोना नहीं तुम बड़ी बहादुर हो, तुमने मेरा तबादला करा दिया।" मैं अपने ट्रांसफर के लिए कितनी अर्जियाँ देता था, तबादला नहीं हुआ। लेकिन मुन्नी मान लेना चाहिए, तुम्हारे लिखे में दम है.....मुन्नी लिखती रहना। बड़े होकर और भी अच्छा लिखना। तुम अच्छे अच्छों की छुट्टी कर देना जैसे मेरी की...।[26] जानकी शरण नायब साहब की ये बात बाद में कितनी सत्य प्रमाणित हुई ये तो हम देख ही सकते हैं। उसके बाद दूसरा प्रेम "मैत्रेयी का अपने एक सहपाठी से होता है। किन्तु ध्यान रहे ये "प्रेम प्रसंग" "एडोलसेंट" पीरियड के हैं और उसे हम शारीरिक नहीं कह सकते। उस उम्र में लड़के-लड़कियों में एक प्रकार का जो स्वभाविक आकर्षण होता है उसका चित्रण यहाँ हुआ है। उस सहपाठी की बचपन में ही शादी हो गयी थी और उसकी पत्नी को "लोक बाग" चढ़ा रहे थे कि वह अपने आदमी को काबू में कर ले और उस रंडी पर सरेआम जूती चलाए[26] मैत्रेयी अपने उस सहपाठी प्रेमी की बहू से टकराने को सोच ही रही थी कि सामने से वह कहती है – "बकने दो, घर भर को। हम तो सब जानते हैं बिटियन की जान से उमर सभ्भारते ही बदफैली लग जात है। अब देखा तो जौन लांछन मायके में हमारे ऊपर तौन ही इते....[27] इस तरह अपने कुछ प्रेम-

प्रसंगो को लेकर मैत्रेयी ने साप्ताहिक हिंदुस्तान लिए अपनी प्रथम प्रेम-कहानी लिखी।

(9) अखियाँ जान सुजान भईं

"अखियाँ जान सुजान भईं" अध्याय कुल 22 पृष्ठों (162 - 184) का है। इसे मैत्रेयी की विशेषता या संस्कार ही कहना चाहिए कि उनकी इन आत्मकथाओं के उपशीर्षक किसी न किसी कवि की पंक्तियों की मुद्रा लिए हुए होते हैं। पर अधिकांशतः उन्होंने कबीर के पदों से शीर्षक लिए हैं। यहाँ पर जो शीर्षक है, उस पर रीतिकाल के रीतिमुक्तधारा के कवि घनानंद की है। आप किन कवियों या लेखकों से प्रभावित है उससे भी आपके साहित्यिक चरित्र को आँका जा सकता है। अध्याय में एक प्रसंग आया है, मैत्रेयी इल्माना के दफतर में बैठी है तभी एक लड़की आती है। मैत्रेयी के पूछने पर उसने बताया कि वह मन्नू भण्डारी की कहानियों पर शोध कर रही है। तभी मैत्रेयी के मन में एक विचार उगता है कि "क्या कभी कोई मेरी रचनाओं पर भी रिसर्च करेगा? यह सवाल कबूतर की तरह उड़कर मैत्रेयी तक आया मन को अशांत कर गया।"[28] और आज मैं नही भारतभर के विश्व-विद्यालयों में मैत्रेयी पर कई-कई आयामों के तहत शोधकार्य हो रहा है। मैत्रेयी कभी जिनके भाग्य से हसद करती थी, उनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए, उन सबसे आज वे आगे निकल आयी हैं। वस्तुतः देखा जाए तो मैत्रेयी को इस मकाम तक ले जाने में कुछेक व्यक्ति और कुछेक प्रसंग उत्तरदायी है। व्यक्तियों में भगवानदास माहौर साप्ताहिक हिंदुस्तान के सह-सम्पादक, इल्माना, मैत्रेयी की बेटियाँ है। प्रसंगो में हम उस प्रसंग को ले सकते हैं जिनमें मैत्रेयी साप्ताहिक हिंदुस्तान के सह-सम्पादक को मिलने "सोनारूपा रेस्ट्रोरां" में जाती है। अपने भय और पूर्वग्रहों की खोल से निकलकर एक नए अनुभव को वह अर्जित करती हैं। वहाँ जाने से पहले मैत्रेयी के मन में खूब ऊहापोह चलता है जिसे निम्नलिखित पंक्तियोंमें दर्शाया गया है

– मैं आपके द्वारा संपादित पत्रिका पर पूरी तरह फिदा हूँ। और आप दीक्षा देने के पहले दक्षिणा के तलबगीर.....वशिष्ठ, याज्ञवल्कय, द्रोणाचार्य, विश्वामित्र जैसे ऋषियों की परम्परा की अगली कड़ी। तय कर रहें है कि स्त्रियाँ गुरूओं को क्या दे सकती हैं। एक विशेष चीज़ अपना शरीर। बेशक मैं आपको अपना हितैषी समझकर यहाँ आयी हूँ। आप मेरी हिम्मत बढ़ायेंगे, मगर आप तो मेरे पति की तरह पेश आ रहे हैं। वही प्यास, वही वासना चहेरे पर कामुक छाया.....निश्चित ही मैं पतिव्रत धर्म से विलग हूँ क्योंकि पति के बिना आज्ञा के चली आई। मगर मैं अपनी चेतना से लैश हुई, कभी चौंकठ लाँधी, क्या ये बात समझ रहें है आप? नहीं समझ रहे तो समझ जाइए कि साहित्य, कला और राजनीति जैसे क्षेत्रों में आने के बहाने हम ऐसी छूटें नहीं चाहते जिन्हें मौज-मस्ती से जोड़ा जाता है। बस मनमानी करते हैं कि हमारी रचनात्मकता को जमीन मिले।[29] मैत्रेयी वहाँ जाती तो है पर सांकेतिक भाषा में सह-सम्पादकजी को बता देती है कि उसके पति भी वहाँ आ सकते है। उसके बाद सह-सम्पादकजी मेत्रैयीको कुछ रचनात्मक परामर्श देते है। वे उन्हें समझाते हैं कि उनको कोई उपन्यासिका लिखनी चाहिए। "चैम्मीन" नामक उपन्यास का हवाला भी देते है जो "मछुआरे" शीर्षक से हिन्दी में प्रकाशित हुआ है। "धीरे बहो दोन" को पढ़ने की सलाह भी देते हैं। रेणु की भाँति अपने आँचलिक अनुभवों और संदर्भों को प्रयुक्त करने की प्रेरणा भी देते हैं। और पथप्रदर्शक की भूमिका में कहते है – "याद रखना कि साहित्य की दुनिया भी बेईमान, झूठे और मक्कार लोगों से भरी पड़ी है। गंदगी क्या होती है, कहाँ होती है इस बात को एक ही तरीके से नहीं जाना जा सकता है। खुद को बचाया जा सकता है।"[30] साप्ताहिक हिंदुस्तान में मैत्रेयी की कहानी प्रतियोगिता के निकष पर असफल रहती है। नतीजे में प्रथम स्थान कानपुर के राजेन्द्रराव को मिला था।[31] परंतु

सह-सम्पादक की बातों को गाँठ में बाँधकर मैत्रेयी "रामश्री चाची" की घटना को लेकर "आक्षेप" नामक कहानी लिखती है जो 8 अप्रैल 1990 के साप्ताहिक हिंदुस्तान में प्रकाशित होती है। एक प्रतिष्ठित पत्रिका में कहानी प्रकाशित होने का पहला अनुभव मेत्रैयी को होता है।

प्रस्तुत अध्याय में मैत्रेयी के जन्म की बात आयी है। खुरजा के बाबूलाल पंडित को नामकरण के लिये बुलाया गया था जो रिवाज के मुताबिक लड़की का नाम किसी फूल से रखनेकी सलाह देते हैं। उसकी जन्मराशि सिंह थी। अतः वे "मैत्रेयी " का नाम सुझाते है और साथ ही याज्ञवल्कय और मैत्रेयी की कथा भी बताते हैं कि किस प्रकार मैत्रेयी याज्ञवल्कय के धन, धान्य को नहीं परंतु उनकी विद्वता को प्राप्त करना चाहती थी। पंडितजीने मैत्रेयी शब्दका अर्थ भी बताया था। मैत्रेय अर्थात् हमदर्द, दोस्त और मैत्रेयी उसका स्त्रीलिंग है।[32]

प्रस्तुत अध्याय में यह भी बताया है कि पति के पूछने पर मैत्रेयी सच-सच बताती है कि वह "सोनारूपा रेस्ट्रोरा" में सह-सम्पादक को मिलने गयी थी। इस पर पतिदेव ने सुनाया भी था। "अच्छा साहित्य हैं, इसकी आड़ में रोमांस"[33] इस तरह यह भी द्योतित होता है कि मैत्रेयी को मैत्रेयी बनने के लिए किस प्रकार ब्राहय, आंतरिक संघर्षों और दबाबों से जूझना पड़ा होगा। एक ही अध्याय में मैत्रेयी के लेखिका होने का जिक्र और साथ ही उनके जन्म की कहानी। अभिप्राय कि यहाँ भी आत्म कथावाली कालक्रमिक्रता को उन्होंने तोड़ा है।

(10) कहूँ रे जे कहिबे भी होय

उपर्युक्त अध्याय कुल 15 पृष्ठ (पृ. 185-200) में आकलित हुआ है। यहाँ लेखिकाने अपने संघर्ष के दिनों का यथार्थ चित्रण किया है। इसके पहले हमने देखा कि साप्ताहिक हिंदुस्तान में लेखिका की कुछ कहानियाँ प्रकाशित होती है, परंतु एक ही पत्रिका में कहानियों का प्रकाशित होना भी किसी नवोदित

लेखक लेखिका के लिए स्वस्थ नहीं समझा जाता है । फलतः मैत्रेयी अपने कहानियों के प्रकाशन का व्याप बढ़ाना चाहती है । उन्हीं दिनों में लेखिका अपनी एक कहानी का पुंलिदा लेकर उस पत्रिका के कार्यालय पहुँचती है और शिकायत करती है कि उनकी कहानी को बिना पढ़े ही लौटा दिया गया है । उनको कहा जाता है कि संपादकजी अभी आते होंगे, यदि कहानी बिना पढ़े लौटी होगी तो निश्चित ही पढ़वायी जाएगी । मैत्रेयी संपादकजी की प्रतीक्षा करती है । थोड़े समय में एक पचास साला व्यक्ति आता है । निमोहियाँ होठों के बीच, पान की पीक छल-छला रही है और होठों के कानों से बह रही है । पैण्ट्-कोट कुछ मलीन से हैं । गले में मफलर.....सबकुछ ढ़ीला-ढ़ाला और बेतरतीं । मैत्रेयी सोचती है "ये सम्पादक है । अगर है तो इनको क्षमा कर देना चाहिए, कहानी की तमीज कहाँ से आए, कमीज के कोलर मुड़े – तुड़े । कहाँ ये और कहाँ – मनोहरश्याम जोशी अपने सह – सम्पादकजी तस्वीर में देखे धर्मवीर भारती साक्षात दर्शन देनेवाली मृणालपाण्ड़े । ये तो हमारे गाँव के गोपीचंद हलवाई से मिल रहे है ।"[34] संपादकजी के आने पर कार्यालय के उस व्यक्ति ने कहा कि ये जो मेड़म आयी हुयी हैं, इनकी शिकायत है कि उनके द्वारा भेजी हुई कहानी बिना पढ़े ही लौटा दी गयी है । इतना सुनते ही संपादकजी लेखिकाके हाथ से कहानी लेकर उसे उलटने पलटने लगे । फिर वे मुस्कुरा के कहते हैं – "अबकी बार बिना पढ़े ही लौटा दी कहानी । अगली बार इसे पढ़कर लौटा देना" ।[35] संपादकजी की बात को सुनकर लेखिका तिलमिला जाती है । इसके बाद दैनिक हिंदुस्तान के संपादक विजयमोहन मानव से लेखिका का परिचय होता है । उसमें लेखिकाकी कई कहानियाँ लगातार प्रकाशित हुईं । इससें लेखिका की गणना नामी-गिरामी साहित्यकारों में भले न हुयी हो परंतु इतना तो सत्य था कि इस समाचारपत्र ने उनको एक विशाल पाठक समुदाय

दिया था। विजय किशोरमानव मैत्रेयी को कहते हैं कि - "आप की कहानी पर जब चित्रकार स्कैच बनाता है। मुझे बधाई देने आता है, बंगाली बाबू। उसका मानना है, यातनाओं के मार्मिक वर्णन करना एक बात है मगर उस यातना से सामना करने के बाद मनुष्यता बरकरार रख पाना, संघर्ष के रास्ते पर चलना है ।[35]

अब लेखिका सोचती है कि उसकी कहानियाँ किसी मासिक कथा-पत्रिका में प्रकाशित होनी चाहिए। इसी जद्दोजहद में एक कथा-पत्रिका के संपादकजी से मुलाकात होती है। जब उनको ज्ञात होता है कि लेखिका के पति एम्स में डॉक्टर हैं तो वे उसे दवाइयों की एक सूची थमा देते हैं। साथ ही कहते हैं – "आप लिख सकती हैं क्योंकि आपके पास अनुभव है। इन दिनों साहित्य में लोग अनुभव अर्जित करने नहीं आते। शैलियाँ इजाद कर रहे हैं। लेखनी सूखती जा रही है। नहीं समझ रहे कि प्राइवेसी लिखने के लिए चाहिए, रचने के लिए, उन्हें बाहरी – संसार में निकलना होगा। समाज से नही जुड़ेंगे – पैठ नहीं – बनाऐंगे, खुद-ब-खुद निष्क्रिय होते जाएगें।"[37]

इस तरह लेखिका के सामने साहित्य जगत का एक विद्रूप खुलता है कि ये तथाकथित साहित्यकार विद्धान संपादक महोदय नवोदित लेखकों का शोषण किस तरह करते हैं। बाद में लेखिका को पता चलता है कि उनका केमिस्ट की दुकान पर हिसाब-किताब चलता था। ये संपादक महोदय ऐसे बीमार थे जो दवाइयाँ बेचते थे।[38] इस तरह के प्रसंगो के कारण मैत्रेयी को कई बार गजालतभरी स्थितियों से गुजरना पड़ा है। पति के कटाक्षतीरों से आहत होना पड़ा है। उन दिनों में मैत्रेयी का परिचय एक विदुषी लेखिका से होता है। जिसका जिक्र लेखिका ने "गोडमदर" के रूप में किया है। वे मैत्रेयी को साहित्यिक समारोहों में अपने साथ ले जाती हैं। नए - नए लोगों से लेखिका का

परिचय होने लगता है, परंतु उसके लिए लेखिका को "गोडमदर" की सेवा में तत्पर रहना पड़ता है। उनको लाने-लिवाने और विविध स्थानों पर जाने के लिए लेखिका को डॉक्टर साहब की गाड़ी का इस्तमाल करना पड़ता है। एकबार ऐसे ही किसी प्रसंग पर डॉक्टर साहब ड्राईवर कों गाड़ी के लिए मना कर देते हैं, तब मारे अपमान के मैत्रेयी का बुरा हाल होता है कि "काटो तो खून नहीं।" लेखिका की टिप्पणी है – "मेरे पति की इच्छा, इस इच्छा में मेरा दखल भी क्या? सिनेमा, पार्टी, मंदिर और बाजार तक में गाडी में बैठकर जाती हूँ, तब मैं नहीं जाती, डॉक्टर साहब की धर्मपत्नी जाती है। मेरे जाने पर तो उन्होंने मुझे मेरी औकात दिखा दी।"[39]

दूसरी ओर डॉक्टर साहब को बराबर लग रहा है कि लेखिका होने की महत्वाकांक्षा में उनकी पत्नी का लोग कई-कई तरह से शोषण कर रहे हैं। दूसरी ओर मैत्रेयी की लड़कियाँ हैं – "जो चाहती हैं कि मम्मी कहानियाँ लिखेंगी, उपन्यास आऐंगे, मम्मी का नाम चारों ओर फैल जाएगा। अंग्रेजी में अनुवाद होंगे, कथाएँ देश-विदेशों तक जाएँगी, ऐसे जैसे "गोन विथ द विंड" जैसे "द किल ए मोकिंग वर्ड"[40] आज हम देख रहे हैं कि मैत्रेयीजी की बेटियों की ये इच्छाएँ रंग लायी हैं। परंतु इसके लिए मैत्रेयी को कितने पापड़ बेलने पड़े हैं उसका वर्णन इस अध्याय में हुआ है। अध्याय के अंत में लेखिका की जो टिप्पणी है, वह सार्थक और सटीक है – "सरकारी और ट्रस्ट से संचालित साहित्य संस्थाओमें बैठे संपादक खुद को गोडफादर के रूप में प्रस्तुत करते हैं। साहित्य में स्वार्थ साधना ही परम् ध्येय है कि अव्यक्त घोषणा रहती है।....आज हमारे आगे नतीजा आ गया जब कितने ही साप्ताहिक पत्र और मासिक पत्रिकाएँ परिदृश्य से गायब हो गए। उनकी हत्या उनके संपादकों के हाथों हुई। ऐसे संपादकोंने पत्र पत्रिकाओं का ही नहीं, नए प्रतिभाशाली,

कल्पनाशील, मगर साधनहीन लेखकों, कवियों की संभावनाओं का खात्मा किया है, रचनाएँ अकाल मौत मरी होंगी। कैसा अपराधिक मामला है, जिसकी सुनवाई के लिए कहीं न्यायालय नहीं। कहते हैं साहित्य व्यक्ति की चेतना, संपन्नता, स्वतंत्रता और जीवन की बेहतरी के लिए रचकर प्रकाशित होता है। लेकिन यहाँ तो साहित्य, साहित्य के आकाओं की दी गयी संस्थाओं का गुलाम है। इससे बड़ा साहित्यिक अनाचार क्या होगा? मास्टर और सर्वेन्टरूल के चलते दूसरा अत्याचार क्या होगा? मैंने शोषण का अद्‌भूत तमाशा साहित्य के क्षेत्र में देखा।[41]

(11) "मच्छी रूखां चढ़ गई"

"मच्छी रूखां चढ़ गई" कबीर भी एक प्रसिद्ध उलटबासी है। कुंडलिनी शक्ति जब जागृत होती है तब चेतना के भ्रमरंद में पहुँचने की योगसाधनाकी जो स्थिति है उसके लिए कबीर ने इस ऊल्टबांसी का प्रयोग किया है। सीधी-सादी भाषा में उसका अर्थ होगा "सिद्धि को प्राप्त करना" "गंतव्य को पा लेना"। प्रस्तुत अध्याय कुल 10 (पृ.201 से 211) कुल 10 पृष्ठों में उपन्यस्त् हुआ है। पूर्ववर्ती अध्यायों में हमने देखा कि मैत्रेयी की कुछ कहानियाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती हैं और पाठकों का एक विस्तृत दायरा भी उन्हें मिलता है। परंतु अभी स्थापित या प्रतिष्ठित लेखिकाओमें उनकी परिगणना नहीं होती थी। स्ट्रग्ल के अपने इन दिनों में वह साहित्य जगत में कुछ कर गुजरने के लिए "गोडमधर" के चक्कर भी काटती थी। उन दिनों लेखिका का रोलमोडल "गोडमधर" ही थी। इसे एक सुखद संयोग ही कहना चाहिए कि उन्ही दिनों ही लेखिका का परिचय सुप्रसिद्ध लेखिका "मन्नूभण्डारी" से होता है। मैत्रेयी 103, हौजखास, दिल्ली – मन्नूभंण्डारी के यहाँ आने-जाने लगती है। मन्नू को मैत्रेयी की ग्रामीण-पृष्ठभूमि और उसके ग्रामीणजीवन के अनुभव आकृष्ट करते हैं। अतः वह मैत्रेयी से कहती है कि उसे अपनी कहानियाँ हंस

को भेजनी चाहिए। इस सिलिसिले में मैत्रेयी का परिचय हंस संपादक राजेन्द्र यादव से भी होता है। यादवजी मैत्रेयी की कहानी ओ पढ़कर उसे लौटा देते हैं। उसे वे हंस के स्तर के अनुरुप नहीं समझते थे।[42]

प्रस्तुत अध्याय में हिमांशु जोशी प्रणीत "छायामत छूना मन" तथा राजेन्द्रयादव प्रणीत "सारा आकाश" का जिक्र भी मिलता है। लेखिका की उपन्यासिका "स्मृतिदंश" तब तक आ चुकी थी। उपन्यासिका लिखने की प्रेरणा मैत्रेयी को सह-सम्पादन के द्वारा मिलती है। उनका मानना था कि साहित्य में लेखिकाओं को उपन्यास के क्षेत्र में भी आना चाहिए, कयोंकि हर कोई चेखव, मण्टो या गुलेरी नहीं होता जो कहानियों के बल पर ही साहित्य में स्थापित हो जाय। "नेहबंध", "मन नाहि दस बीस" जैसी कहानियाँ "डिक्टेटर" (राजेन्द्रयादव) लौटा चुके थे। मैत्रेयी को माताजी (कस्तूरी) की बातें याद आती हैं कि "दुःखों को दिल में जमा करते जाओ, वे खाद की तरह ताकतवर होते जाते हैं और जो आये दिन नयी पौंध को बढ़ाकर खड़ा करते हैं।[43] कस्तूरी की ये बातें मैत्रेयी को टूट ने नहीं देती है। "मन नाहि दस बीस" में मैत्रेयी ने अपने बालसखा "एदल्ला" की स्मृति को ताजा किया है।[44] यहाँ पर लेखिका ने विवाह और प्रेमविवाह के अंतर को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि मनुष्य कभी-कभी अपने ही संस्कारों से हारता है। विवाह अगर जाति, धर्म, मर्यादा और परंपरा को लेकर रुढ़ है। तो प्रेमविवाह ही वह आधुनिक चलन है जो जाति, धर्म और मर्यादा को तोड़ देता है लेकिन हंस संपादक का कहना था – "असल समस्या तो प्रेमविवाह के बाद खड़ी होती है। लड़का-लड़की, माता-पिता और परिवार द्वारा दिए गए धर्म जाति रीति-रिवाजों को तोड़ देते है। मगर जब एसे ही सरोकार खुद से जुड़ते हैं, तो उनमें दुविधा पैदा होती है। (मन्नूजी की त्रिशंकु कहानी) यहाँ दृष्टव्य रहेगी। अंतर्द्वन्द में फँस जाते हैं। बहुत जगह

ऐसा देखने में आता है कि पति मंदिर जाता है और पत्नी नमाज़ पढ़ती है। (शैलेष मटियानी की "कठफोड़वा" कहानी इस संदर्भ में दृष्टव्य कहीं जा सकती है) कहने को उसके पास धार्मिक स्वतंत्रता है मगर यह स्वतंत्रता उन्हें एक नहीं होने देती। कई बार इस व्यवहार से कुंठाओं का जन्म होता है। यही जातियों का चक्कर है। लड़की छोटी जाति की है और लड़का बड़ी जाति का, विवाह के समय या किसी भी जाति के नहीं होते, धीरे-धीरे दोनों के भीतर जातियाँ सिर उठाती है। लड़की को दोहरा उपमान सहना होता है स्त्री होने का और नीची जात होने का। (गोपाल उपाध्याय कृत "एक टुकडा इतिहास" इसका उदाहरण है।) यदि लड़का छोटी स्थिति में है तो उसके पुरुष अहंकार को बात-बात पर ठेस लगती है। महत्वहीन भावनाएँ सिर चढ़कर बोलती है। कहानी इस कशमकश को रेखांकित करती जाए कैसे बाहरी स्थितियों से लड़नेवाले अपने भीतरी मोर्चों पर संस्कारों से हारते हैं।[45]

यहाँ पर लेखिका ने शहर और गाँव के लोगों के अंतर भी रेखांकित किया है। यथा- "यह मेरी कुंठा या हीनता ग्रंथि ही है जो मानती है कि पढ़े-लिखे शहरी लोग सभ्यता का पाखंड़ कर रहे हैं कि शहरी लोगों की जीवन-कथाएँ गाँव में चलते चुटकुले से ज्यादा नहीं, ये कि गाँव में प्रेमविवाह ही सबसे बड़ी क्रांति है।[46] इस वैवाहिक जद्दोजहद में मैत्रेयी - कहानी लिखती है। वह तीन महीनों के बाद तीसरी - कहानी थी पर वह भी लौट आती है। चौथी कहानी "कृतज्ञ" भी लौटा दी जाती है। उस समय मैत्रेयी का स्वगत कथन है – "आप कहते हैं मैं अब नहीं आऊँ। मैं बता रही हूँ कि मैं आऊँगी। आप कहते हैं कि आप मेरी कहानी नहीं छाप पाऐंगे। मैं कह रही हूँ, मैं एक और कहानी लाऊँगी। मैं आउँगी" राजेन्द्रयादव हंस संपादक।[47] और फिर मैत्रेयी "चकबंदी" के कारण अपनी गयी हुई जमीन को वापस पाने के संघर्ष की कथा को लेकर आती है।

कहानी का शीर्षक लेखिका ने "सेंध" रखा था। यहाँ मैत्रेयी का बुंदेलखण्ड़ी, ग्रामीण महिला की जीवटवाला चरित्र मिलता है। यहाँ पर लेखिका ने "रक्कस की प्रथा" का भी उल्लेख किया है। यह प्रथा बुंदेलखण्ड़ की है। यह रस्म लड़के के लड़के की एक साल की अवस्था से 3 साल की उम्र तक की जाती है। बच्चे की माँ, बुआ, दादी, चाची, ताई के साथ मोहल्लें का स्त्री-समुदाय पूरी-पुआ, पपरिया, गुलगुला बनाकर खेतों पर जाता है। धरती की पूजा होती है। बच्चे को तिलक लगाते हैं। घूँटा बाँधते हैं (काला धागा कमर में) और फिर अपने खेतों की सीमा दिखाते है। यह तेरी भूमि, तेरे पुरखों की जमीन। अब तेरे हवाले है। इसकी रक्षा तू करेगा दुश्मन तेरे खेत की मिट्टी न छुए।[48] परंतु मैत्रेयी तो लड़की थी उसको "रक्कस" नहीं दिया गया था। आदमी वयस्क होने पर अपनी जमीन को वापिस पाने के संघर्ष की भूमि पर यह कहानी लिखी गई थी। हंस में छपनेवाली प्रथम कहानी थी जिसका शीर्षक था "जमीन अपनी अपनी"। जिस संपादक ने लेखिका के रचनात्मक वजूद को पाँच बार धूल में रगड़ा था। वही हंस संपादक उस अंक लेकर मन्नूभण्डारी के साथ मैत्रेयी के घर गये थे।[49] यहाँ पर राजेन्द्रयादव का वह वाक्य भी लेखिका ने दिया है। जिसमें वह कहते हैं – "साहित्य के मामले में मैं बहुत हरामजादा हूँ।" तब लेखिका मन ही मन कहती है – "आप किस मामले में इस कोटि के नहीं है? गोडमधर बोतें करती थी अपनी सखियों सें मैं ध्यान हीं देती थी लेकिन अब जान गयी वे आप ही थें।"[50]

यहाँ एक बात स्पष्ट हुई है कि राजेन्द्र यादव कहानी चयन के विषय में किसी प्रकार की रियायत नहीं बरतते हैं। किसी की शेहशर्म में आकर कहानी छापना उनकी फितरत में नहीं है। यदि व्यक्ति में लिखने की लगन और हौंसला है तो वह राजेन्द्रयादव से बहुत कुछ सीख सकते हैं। राजेन्द्रयादव के

संदर्भ में महिला तबकों में किसी प्रकार की गल्तफहमियाँ थीं; उसका भी उद्घाटन यहाँ हुआ है। हंस में कहानी को छपना मानों लेखक की कुंड़लिनी जाग्रत होना है। सहीं मायनों में मछली रुखा चढ़ गई।

काजल केरी कोठरी

"काजल केरी कोठरी" (पृ.212 से 230) में उपनयस्त् हुआ है। शीर्षक काजल केरी कोठरी – प्रतीकात्मक है। जिस प्रकार काजल केरी कोठरी में कोई बेदाग नहीं रह सकता ठीक उसी प्रकार साहित्यजगत की कोठरी भी काजल की कोठरी के समान होती है। यहाँ पर पुरुषों के साथ में ढला नारी लेखन तो विवादों के ज्यादा घेरें में नहीं आता पर उस ढाँचे से बाहर कदम रखनेवाली साहसिक लेखिकाओं को तरह-तरह के चारित्रिक कठघरों में खड़ा किया जाता है। कृष्णासोबती तथा मैत्रेयी इस दूसरी कोटि में आती हैं। "बेतवा वहती रही" कि सर्वसहा भारतीय नारी की छबि कई समीक्षकों को अच्छी लगी जिनमें नवभारत टाइम्स के संपादक और जाने माने भाषा विद् डॉ.विद्या निवास मिश्र भी आते हैं। परंतु राजेन्द्रयादव और मन्नूभण्डारी को मिलने के बाद मैत्रेयी को अपनी जमीन मिल जाती है। बेतवा वहती रही कि उर्वशी के ठीक विपरीत "इदन्नमम" की "मंदा" है। इस प्रकार का उपन्यास लिखने का विचार और साहस राजेन्द्रयादव की प्रेरणा है। "इदन्नमम" का ग्रामीण बुंदेलखण्ड़ और उसके जीवानानुभव स्वयं मैत्रेयी पुष्पा अर्जित किए हैं। इंदन्नमम की रचना प्रक्रिया के दौरान मैत्रेयी रेणु के प्रभाव में थी। इसका उल्लेख प्रस्तुत अध्याय में हुआ है, जिस प्रकार रेणु अपनी जमीन से अपने पात्रों को उकरते है। ठीक उसी प्रकार मैत्रेयी इदन्नमम में बुंदेलखण्ड़ की धरती से पात्रों को उकेरती हैं। उपन्यास के प्रकाशित होते ही हिन्दी साहित्य जगत में एक तहलका सा मच जाता है। डॉ. नामवरसिंह, डॉ.मनोहर श्यामजोशी जेसे राजेन्द्रयादव, मन्नू

भण्डारी, निर्मलाजैन जैसे हिन्दी के सुधी-समीक्षक इदन्नमम् की भूरी-भूरी प्रशंसा करते हैं । बंग्लोर से सारस्वती संस्था द्वारा नंजनागुरु तिरुम्लम्बा पुरस्कार भी प्राप्त इदन्नमम् के लिए होता है । जो पाँच साल में हिन्दी उपन्यास को दिया जाता था । उसके पहले "फैंसला" कहानी को कथा पुरस्कार और "चिन्हार" कहानी हिन्दी अकादमी का कृति-सन्मान मिलता है ।[51] इदन्नमम् के कारण मैत्रेयी हिन्दी साहित्य जगत में एक स्थापित लेखिका के रुप में स्वीकृत होती है । निर्मलाजैन ने अपने लेख में लिखा था – "इदन्नमम् पढ़ने के लिए बेतवा बहती रही" पढ़ा, लगा कि मैत्रेयी ने लंबी छलाँग लगा दी है ।"[52] परंतु इस के कारण गोडमधर संदेह में आ जाती है जो गोडमधर "मैत्रेयी को लेकर साहित्यिक समारोह में जाती थीं, वही अब मैत्रेयी से किनारा करने लगती हैं, इतना ही नही, बल्कि उस पर तरह-तरह के लांछन भी लगाती है । साहित्यिक चोरी का भी आरोप लगाया जाता है । यहाँ एक बात स्पष्ट होती है कि जब तक मैत्रेयी इतनी प्रतिष्ठित नहीं हुई थी, उसके भीतर की आग बाहर नहीं आयी थी, तब तक ये लोग मैत्रेयी को आगे बढ़ाने के प्रयत्न कर रहे थे । परंतु जैसे ही - मैत्रेयी अपनी स्वयं की उर्जा और प्रतिभा से ऊपर उठती है, वहाँ ईष्या के कारण यही लोग मैत्रेयी पर तरह-तरह के आरोप लगाते हैं कि मैत्रेयी तो अपने समीक्षकों को मिठाई के डिब्बे बाँट रही है । इस तरह के आरोप प्रायः वे लोग लगाते थे । जिन्होंने अपनी रचनाओंके प्रकाशन पर शराब की पार्टियाँ तक एरेंज की थीं ।

प्रस्तुत अध्याय में मनोहरश्यामजोशी के चरित्र पर भी प्रकाश डाला गया है । "तीसरी कसम" गीतापुष्पशॉ, रोबिनपुष्पशॉ आदि के उल्लेख भी मिलते हैं । साहित्यिक लांछनाओं के माहौल में सबसे ज्यादा संबल मैत्रेयी को मन्नूजी से मिलता है । लेखिका ने एक स्थान पर टिप्पणी की है –

"मैं सोच रही थीं, गोडमधर शायद इस भाव से आहत है कि चीज जहाँ पहुँच गयी है, वहाँ मुझे अब उनकी जरुरत नहीं है ।"[53] इन्हीं गोडमधर के संदर्भ में ही एक स्थान पर कहा गया है –

"गोडमधर ये साहित्यकार जैसे धर्मवीर भारती, विष्णुप्रभाकर, मन्नू भण्डारी, उषाप्रियंवदा, गिरिराज किशोर जो कुछ कह रहे हैं, कहने दीजिए ये आपकों चिढ़ा नहीं रहे एक नयी लेखिका को प्रोत्साहित कर रहे हैं । यकीन मानिए इस प्रोत्साहन से आगे की रचना भले करुँ गुरुर नहीं करुँगी ।"[54]

इदन्नमम् के साथ ही साथ सुरेन्द्रवर्मा कृत "मुझे चाँद चाहिए" उपन्यास भी आया था और तब सन् 1993 के आस-पास हंस तथा अन्य अनेक पत्रिकाओं में समीक्षात्मक लेख भी आए थें। जिनमें इन दोनों उपन्यासों के नारी-विमर्श पर तुलनात्मक विचार भी हुआ था। इदन्नमम् को हिन्दी का एक श्रेष्ठ उपन्यास माना गया है, वहाँ पर हिन्दी आलोचकों का एक तबका ऐसा भी है, जहाँ उसे तीसरे और चौथे दर्जे की रचना कहा गया है । उत्तर आधुनिकता के व्याख्याकार सुधीशपचौरीजी ने तो इदन्नमम् को "अधूरी अहीर कथा" कह कर उसे ध्वस्त करने का आनंद भी उठाया है । इदन्नमम् के कारण जहाँ मैत्रेयी को अकूत ख्याति प्राप्त हुई । वहाँ उसने कुछ नए साहित्यिक शत्रु भी पैदा किए। लेखिका पर यह भी इल्जाम लगाया जाता है कि उसने वरिष्ठ और विदुषी लेखिकाओं का हक भी मारा है उनकी जगह हड़प कर बैठ गई है और यह सब किया है उसने राजेन्द्रयादव की कृपा से ।[55] यहाँ मैं यह स्पष्ट करना चाहूँगी कि मैत्रेयी पुष्पा ने साहित्य जगत में जो मकाम हासिल किया वह अपने संघर्ष कामी जीवनानुभावों के कारण है और लिखने की एक जहदोजहद और आग के कारण है । ये न हो तो हजार राजेन्द्रयादव भी मैत्रेयी पुष्पा जैसी लेखिका को

नहीं गढ़ सकते। राजेन्द्रयादव ने मैत्रेयी पुष्पा के भीतर की "मैत्रेयी" को जगाया है। आगे का काम स्वयं मैत्रेयी ने अपने बल-बूते और प्रतिभा पर साधा है।

पति संग जागी सुन्दरी

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का 12 वां अध्याय "पति संग जागी सुन्दरी" (230-252) पृष्ठों में उपन्यस्त् हुआ है। प्रस्तुत अध्याय में लेखिका ने "इदन्नमम्" तथा "चाक" के संदर्भ में उनकी रचना प्रक्रिया के संदर्भ में, उनमें निरुपित जीवनानुभावों के संदर्भ में काफी जानकारियाँ दी हैं। इसमें लेखिका ने यह भी बताया है कि उन्हीं दिनों में उन्होंने कृष्णाबती के उपन्यास "जिन्दगीनामा" को भी पढ़ा था। उपन्यास यदि ग्रामीण परिवेश को लेकर आता है तो उसमें मानक भाषा के स्थान पर बोली का ही प्राधान्य रहता है और रहना चाहिए। यहाँ पर लेखिका ने अपने साहित्य विषयक प्रयोजन को भी स्पष्ट किया है। उनके यहाँ लिखना जीने की एक अनिवार्य शर्त के रुप में आता है। बड़ौदा में हुई एक संगोष्ठी में मैत्रेयीजी ने बताया था कि उनकी वास्तविक जिंदगी का प्रारंभ कब और कैसे हुआ? उसमें उन्होंने स्पष्ट किया था कि जब से उन्होंने गरीबों के अधिकारोंको लेकर लिखने की शुरुआत की वहीं से उनकी जिंदगी भी शुरु होती है।[56] प्रस्तुत अध्याय में लेखिका ने यह भी बताया है कि इदन्नमम और चाक के कारण सोनपुरा और जुझारपुरा गाँव में मैत्रेयी पुष्पा को लेकर कई प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हुई थीं। इन गाँवों में उक्त दो उपन्यासों को लेकर इतनी तनावपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो गई थी कि स्वयं मैत्रेयी को "ओरछा" पुलिस संरक्षण में जाना पड़ा था। जाति और गोत्र को लेकर जो विवाद खड़े होते हैं उसके संदर्भ में लेखिकाने खापपंचायतों और "ओनर किंलिग" का भी उल्लेख किया है। उन दिनों में बबलू और मुनिया नामक दो

युवक-युवती भागकर प्रेमविवाह कर लेतें हैं, जिनको भगाने में मंदा का हाथ है ऐसा कहा जाता है । उस लड़की को ढूँढने के लिए लोग मैत्रेयी के निवास स्थान "नोएडा" तक जाते हैं । उन्हें आशंका थीं कि मैत्रेयी ने ही उनको संरक्षण दिया होंगा ।[57] मुनिया और बबलू एक ही जाति के थे, गोत्र भी भिन्न था । परंतु यहाँ ग्रामीण लोगों के अपने रिवाजों के कारण उस विवाह का विरोध हो रहा था । और इन सब घटनाओं के पीछे मैत्रेयी के लेखन को उत्तरदायी ठहराया जा रहा था । थोड़े से समय में मैत्रेयी पुष्पा को साहित्यजगत में जो प्रतिष्ठा मिली है उसके कारण कई लोगों को उनसे इर्ष्या भी होने लगी है । परंतु यहाँ इस तथ्य को गौरतलब रखना चाहिए कि इस प्रकार के लेखन के लिए कैसे-कैसे और कितने-कितने जोखिम उठाने पड़ते हैं । मैत्रेयी की लेखन में हमें कथनी करनी का अंतर नहीं मिलता । बिछियाँ और करवाचौथ को त्यागने के कारण उनके अपने वैवाहिक जीवन में कटुता आई है । उनकी द्वितीयपुत्री मोहिता की गृहस्थी ध्वंस होने के कगार पर है ।[58] करवाचौथ के व्रत को मैत्रेयी पति के प्रति पत्नी की वफादारी का रिन्युअल बताती है ।[59] इनकी ऐसी खर बातों के लिए उन्हें अनेक आलोचनाओं का भी शिकार होना पड़ता है । जहाँ सुष्मा स्वराज करवाचौथ के व्रत को भारतीय संस्कृति और भारतीयनारी की पतिभक्ति का प्रमाण बताती है । वहाँ मैत्रेयी उसे "वफादारी" का रिन्युअल कहकर खारिज कर देती है ।[60] "चाक" उपन्यास की सारंग के कारण भी बुदेलखण्ड़ के ग्रामीण तबकों में काफी हलचल मच गयी थी । स्वयं मैत्रेयी के पति डॉक्टर साहब को यह लगता है कि "चाक" की सारंग का चरित्र-चित्रण मैत्रेयी ने अपने वैयक्तिक अनुभवोंसे ही किया है । सरल शब्दों में सारंग और कोई नहीं मैत्रेयी ही है । जहाँ सुधीशपचौरी जैसे आलोचक इदन्नमम को "अधूरी अहीरकथा" कहकर कटु आलोचना करते है । वहाँ पर कमलाप्रसाद, गिरिराजकिशोर, डॉ.चन्द्रकांत

वांदिवेडेकर आदि ने इन उपन्यासों की भूरि भूरि प्रशंसा भी की है । प्रस्तुत अध्याय में खेरापतिन दादी और **"ललमनियाँ"** नृत्य का भी उल्लेख आया है । गाँव में जो लोकगीत गाये जाते हैं, उनमें समय समय पर नए-नए बंध भी जोड़े जाते है । कई बार तत्कालीन घटनाओंको भी उनमें जोड़ लिया जाता है । खेरापतिन दादी के गीतों में हमें "रामकथा" का एक नया विमर्श भी मिलता है ।[61] इस संदर्भ में खेरापतिन दादी का यह कथन दृष्टव्य रहेगा – "बेटी, साँच को अगिन में न तपाया जाए तो झूठ जिन्दा कैसे रहे? बस, यही अगिन परीच्छा थी। नहीं तो आग की लपटों में बैठकर कोई जिन्दा बचा है? हम तो यह जानते हैं कि या तो वह आग नहीं थी या फिर हाडमांस की सीता नहीं थी । वैसे भी रामजी को सोने की सीता बनवाकर रखने की लत थी । अपनी महिमा और मर्दानगी की खातिर सोनेकी सीता आग में उतार दी हो और सोने की काया कुन्दन हो गई हो ....." सच्ची बात तो यह है कि खिसियाकर रामजी ने सीताकी अजुध्या छीन ली। गंगाजी हथियाली। पत्नी को देस निकाला दे दिया। लो, इसी बात पर रामजी से लवकुश लड़े । नाइंसाफी करनेवाला उनका बाप था भी या नहीं? सीता ने ऐसे पति का मुँह नहीं देखना चाहा। भूमि समाधि लेनी पड़ी। सो देखलो कि लवकुश ने रामजी को जलसमाधि दे दी। तुम बेटौं को अपना अंस नही मान पाए लो बेटा तुम्हें बाप कैसे मानें?"[62]

इसी अध्यायमें मैत्रेयीजी ने लिखा है – सच तो यह है कि जिस तरह मैं सोचती हूँ, उसी तरह लिखती हूँ। कहानियाँ और उपन्यास औरत की जिंदगी के दस्तावेज हैं तो वे निश्चित तौर पर मेरे तजुर्बों से गुजरे हैं। क्या स्त्री और पुरुष में प्रेमकी आकांक्षा एक सी नैसर्गिक भावना नहीं? अगर कुछ अलग-अलग दिखता है तो वह संस्कार जन्म अहंकार नतीजा है कि पुरुष का प्रेम पराक्रमी दिखता है, जबकी स्त्री अहंकार से मुक्त होकर प्रेम करती है ।"[63]

लेखिका ने हमारे समाज की इस अंतर्विरोध को भी सामने रखा है कि भारतीय स्त्री को न आर्थिक आत्मनिर्भरता सुखी कर सकती है, न चेतनासंपन्नता उसकी सहायक हो सकती है । बस, उसे पारंपरिक कर्मकांड़ ही सुखी और सुरक्षित रहने की गारंटी देते हैं । अपनी पूरी ताकात लगाकर भी मैत्रेयी नवयुवाबेटी का दांपत्य नहीं बचा पाती है । प्रस्तुत अध्याय में यह भी बताया है कि इन दो उपन्यासों के कारण समाजमें वह जितनी आहत हुई है, उतना ही उनका आत्मविश्वास भी बढ़ा है । लेखिका अनुभव करती है कि संघर्ष भी आनंद का माहौल रच सकता है । अध्याय अंत इन पंक्तियों के साथ हुआ है – "

चकल्लसों, हलचलों और विवादों के भँवर में मैं हूँ तो क्या हुआ? बहर हाल मेरा आत्मविश्वास बढ़ने लगा । शीर्ष लेखिका कृष्णासोबती को "चाक" बहुत पसंद आया । वीरेन्द्रयादव ने मेरे भावों को रचनात्मक सौंदर्य के रुपमें देखा और गिरिराज किशोर लगातार लिखने के लिए आगे बढ़ने की हिदायत देते थे । तब मैंने समझा, मैं किसी विरोधी के निमंत्रण में आनेवाली नहीं, दुःख ने मेरे मन को परिष्कृत ऐसे ही किया है, जैसे गाँवो में सघन पीड़ा की स्थितियों में चंग बजती है, ढमरु मादंग पर मनोहर राग तैयार होता है ।"[64]

यह तन जारों, मसि करों

चौदहवाँ अध्याय "यह तन जारों मसि करों" कुल 29 पृष्ठों में (253-281) उपन्यस्त् हुआ हैं । इसमें मैत्रेयी ने "इदन्नमम" और "चाक" के उपरांत के महत्वपूर्ण उपन्यास "अल्मा कबूतरी" (सन् 2000) के लेखन की पृष्ठभूमि को निरुपित किया है ।

उक्त दो उपन्यासों की जो समीक्षाएँ आईं और हिन्दी के कई सुधी समीक्षकों ने उनकी जो भूरि-भूरि प्रशंसा की उसके कारण मैत्रेयीजी का साहस और विश्वास और बढ़ गया । और एकदम आगे बढ़कर उन लोगों के जीवन पर

उपन्यास लिखने का मन बनाया, जिनको हमारे सरकारी दफतरों में गजटोंमें जन्मजात अपराधी जातियों में परिगणित कर दिया है। परिगणित करके उनके मानवीय अधिकारों पर एक प्रश्नचिहन दाग दिया है। वस्तुतः इसकी शुरुआत ब्रिटिशशासन में ही हो गयी थी। परंतु आज़ादी के बाद उसमें परिवर्तन आना चाहिए था। भूतपूर्व प्रधानमंत्री पं.जवाहरलाल नहेरुने इन जातियों के दु:ख-दर्द के संदर्भ में व्याख्यान भी दिया था, परंतु इस दिशा में कोई ठोस और कारगर कार्य नहीं हुआ। सरकार और पुलिस का रवैया इन जातियों के लोगों के प्रति वैसा ही बना रहा क्योंकि इनमें इनको सबसे बड़ी सुविधा यह होती कि कहीं चोरी और डकैती होने पर ज्यादा छान-बीन नहीं करनी पड़ती। कुछ कुख्यात जातियों के लोगों को धरपकड़ लिया जाता है। और उनसे जबरदस्ती अपराध अंगीकृत करवाया जाता है। बुंदेलखण्ड के कुछ जिलोंमें "कबूतरा" नामक जाति है। जिनकी गणना इस प्रकार की अपराधी जातियों में होती है। "अल्मा-कबूतरी" से पूर्व डॉ.रांगेयराघव ने "कब तक पूकारुँ" उपन्यास में राजस्थान की इसी प्रकार की जनजाति "कर्नटों" के जीवन पर उपन्यास लिखा था। उसके बाद एक लंबे अंतराल के पश्चात मैत्रेयी इस अछूत विषय को उठाने का साहस करती हैं। इस संदर्भ में मैत्रेयीने प्रस्तुत अध्याय में कहा है – "विमुक्त जातियों का आधार, प्रधानमंत्री का भाषण गणित का रुप ले गया, इस गणित के कर्ता-धर्ता बड़े समाज के मानवरुपी गिद्ध बने। यह मैं क्या सोच रही हूँ? कि अपने आत्मीयजनों में शामिल दतिया के बी.एल.पांडे, झाँसी के मदनमानव (ध्यानरहें यह वही मनदमानव है जब मैत्रेयी झाँसी कोलेज में थी तब छात्रनेता थे और जिसके चुनावप्रचार में मैत्रेयी ने भी अपना योगदान दिया था), खिल्ली-मडोराँ खुर्दे के देवीदयाल और कबूतरा जनजाति पर शोधकरनेवाले प्रो.पी.आर.शुक्ल के साथ मिलकर सुधारवादी नीति की बखिया उधेर रही हूँ? आँकडे देखते हुए लगता है, खिल्ली-मडोस खुर्दे की कबूतरा बस्तियाँ विभिन्न नामों से पूरे देश में

फैल गयी हैं। इन बस्तियों के ऊपर चीलें उड़ रही हैं, नीचे गिद्ध घेर रहे हैं, वे उनको खींच- खींचकर वहाँ ले जा रहे हैं। जहाँ दौड़ कर उन्हें रौंद लिया जाय, आखिर छह करोड जन्मजात अपराधियों को विमुक्त मनुष्य बनाना।"[65]

मैत्रेयीजी जब खिल्ली में यादव परिवार में रहती थीं, तब खिल्ली के इन कबूतराजातियों से थोड़ा-बहुत परिचय था। पर यदि उपन्यास लिखना है तो उतने से काम नहीं चलता। अतः वह बाकायदा शोध अनुसंधान की योजना बनाती है। आंग्लविवेचक और उपन्यासकार जायस कैरी महोदय ने उपन्यास लेखन में इस प्रकार के अनुसंधान को अत्यंत आवश्यक बताया है। यथा –

"Mr. Carry explained that he was now 'plotting' the book. There was research yet to be done. Research, he explained, was sometimes a bore, but it was necessary for getting the political and social background of his work right."[66]

इस अध्याय में यह ज्ञापित हुआ है कि मैत्रेयी अपराधी जनजातियों को लेकर उपन्यास रचना की योजना बना रही है। सुप्रसिद्ध लेखिका (तत्सम् उपन्यास की लेखिका) राजीसेठ को मैत्रेयी की यह भूमिका नापसंद आयी।[67] परंतु मैत्रेयी अपना मन बना चुकी थीं। किन्तु इसी बीच सबसे छोटी बिटिया सुजाता के विवाह को लेकर लेखन में कुछ व्यवधान आया। सुजाता स्वयं डॉक्टर थी और एक डॉक्टर लड़के से प्रेमविवाह करना चाहती थीं। परंतु वह लड़का अनुसूचितजाति (SC) का था। फलतः प्रथम द्रष्टया मैत्रेयी इन सबंधो को लेकर हिचकिचाती है। यहाँ पर हमारें सुशिक्षित बुद्धिजीवी संभ्रांत वर्ग के लोगों की दोगली नीति का भी मैत्रेयी ने उल्लेख किया है। जिसमें यह कहा जाता है, कि प्रेम करो प्रेमविवाह भी करो परंतु इन बातों का ध्यान रखो कि लड़का शुद्रजाति का न हो, मुसलमान न हो और ईसाई न हो।"[68] इस दृष्टि से

मन्नू भंण्डारी की "त्रिशंकु" कहानी दृष्टव्य रह सकती है । नारीविमर्श, नारीमुक्ति आदि की बातें करनेवाली और लिखनेवाली मैत्रेयी भी एक बार तो सकते में आ जाती है । परंतु उस लड़के से मिलने के बाद और उसकी शालीनता भरी और संस्कारयुक्त बातों को सुनने के बाद मैत्रेयी उन दोनों का विवाह न केवल करवाती है परंतु बाकायदा उसे सामाजिक द्वष्टया स्वीकृति भी प्रदान करती है, इसे मैत्रेयी का एक साहसिक कदम कहना चाहिए । प्रायः लेखकों में कथनी करनी का अंतर मिलता है । परंतु मैत्रेयी इस अंतर को पाटने में सफल रहती है । डॉक्टर साहब क-मन से ही सही पर अंततः इस रिश्ते को स्वीकृति देते हैं । इस के उपरांत मैत्रेयी पुनः कबूतराजाति पर लिखने का मन बनाती है और उसके कारण वह दिल्ली से झाँसी और खिल्ली की अनेक यात्राएँ करती हैं । कबूतराओं से संपर्क स्थापित करने में उसको धर्मभाई "सोबरन" जो दादा चीमनसिंह यादव का बेटा था, खूब सहायता करता है । सोबरन चीमनसिंह का बिगड़ा हुआ बेटा था, क्योंकि उसका उठना, बैठना, खाना-पीना सब कबूतरों के साथ था । कबूतरी औरतों के साथ उसके संबंध भी थे । इस प्रकार सोबरन यादव होते हुए भी संस्कारों की दृष्टि से कबूतरा ही बन गया था । "अल्मा कबूतरी" उपन्यास का "मंसाराम" सोबरन से ही निर्मित हुआ है ।[69] कबूतरों के जीवन पर शोध करके लिखना तलवार की धार पर चलने के मानिंद था । अंग्रेजी मुहावरे का यदि प्रयोग करें तो – "It was not a cup of tea" कबूतरा बस्तियों में घूसना, कबूतरा लोंगो की गंदी, अश्लील गालियों और बातों को सुनना । किसी भी शिक्षित संभ्रांत महिला के लिए बड़ा ही कष्ट प्रद हो सकता है । प्रथमतः वह लोग "कज्जों" पर विश्वास ही नहीं करते । कबूतरा लोग अन्य उच्च जातियों के लोगों को "कज्जा" कहते हैं । और कज्जा लोगों से घृणा करते हैं ।[70] यह समाज-मनोविज्ञान (Social-Psychology) का एक

रसप्रद विषय हो सकता है कि निम्नजाति के लोग अपनी घृणा या नापसंदगी को व्यक्त करने के लिए उच्चजातियों के लिए इस प्रकार के शब्द ढूँढ लेते हैं । गुजरात के ग्रामीण इलाकों में कहीं-कहीं पर राजपूत ठाकुर के लिए "डूचा" बारहैया क्षत्रियों के लिए "कोरा" शब्द प्रचलित है ।[71] एक स्थान पर तो मैत्रेयी को बड़ी यंत्रणापूर्ण स्थिति से गुजरना पड़ा था, जब एक कबूतर युवक अपने "यौनअंग" को पकड़कर उनके सामने खड़ा हो गया था ।[72] और उसने मैत्रेयी को भी उसका घाघरा ऊपर उठाने के लिए कहा था । इन्हीं सब कबूतरा-कबूतरियों के बीच एक तेजतर्रार कबूतरी से मैत्रेयी की मुलाकात होती है । वही इस उपन्यास की नायिका "अल्मा कबूतरी" है । प्रस्तुत अध्याय में मन्नू भंण्डारी "महाभोज" तथा लक्ष्मण गायकवाड प्रणीत "उच्चिलया" का भी उल्लेख हुआ है । सन् 2000 में "अल्मा कबूतरी" उपन्यास प्रकाशित होता है और उसे "सार्क लिटरेरी" अवार्ड भी मिलता है ।[73] कबूतरों से जुड़े हुए अनेक प्रसंगों का वर्णन लेखिका ने इस अध्याय में किया है । इससे प्रस्तुत उपन्यास की रचना प्रक्रिया को समझने में आसानी रहती है ।

धरती बरसै अंबर भीजै

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का यह पंदरहवां अध्याय कुल 24 पृष्ठों में (पृ.282-306) उपन्यस्त् हुआ है । इसका शीर्षक भी मैत्रेयीजी ने कबीर की उलटबासी से रखा है । प्रकटतः यह पंक्ति उल्टी लगती है क्योंकि अंबर बरसता है और धरती भीगती है परंतु इसके विपरीत कथन है । कारण हमारे इस समाज में भी ऐसा ही होता है लोग कहते कुछ हैं करते कुछ हैं । इसमें मैत्रेयीजी ने "रेणु" और राजेन्द्रयादव से उनका जो रागात्मक संबंध है उसे स्वीकार किया है । राजेन्द्र यादव के प्रति एक प्रकार का भक्तिभाव मैत्रेयीजी में

दृष्टिगोचर होता है और यह स्वाभाविक भी है। क्योंकि राजेन्द्र यादव ने मैत्रेयी की भीतरी ऊर्जा को पहचानते हुए, उनकी अपनी जमीन को पहचानते हुए, उनको अपनी जमीन की और जमीर की कहानियों से उनको जोड़ा। इसे भी एक संयोग ही समझना चाहिए, मन्नुजी द्वारा यदि राजेन्द्रयादव से परिचय न होता तो मैत्रेयी कवयित्री और लेखिका तो शायद बन जाती पर नारीविमर्श की इतनी सशक्त लेखिका नहीं बनती। इसका अर्थ यह कतई नहीं कि मैत्रेयी का लिखा हुआ राजेन्द्रयादवजी का लिखा हुआ है, जैसा कि कुछ लोग मानते हैं। राजेन्द्रयादव ने उनकी ऊर्जा और प्रतिभा को एक सही दिशामें मोड़ने का काम किया है। अन्यथा राजेन्द्रयादव स्वयं रेणु सरीखे बड़े लेखक नहीं बन जाते। अनुभव लिखने की जद्दोजहद संघर्ष भाषा के तेवर, यह सब मैत्रेयी करती है। अतः "राजेन्द्रयादव के प्रति मैत्रेयीजी का भक्ति भाव स्वाभाविक ही समझा जाएगा। डॉक्टर साहब का अपनी पत्नी और राजेन्द्रयादव के प्रति जो व्यवहार है वह प्रकटतः एक अनबूज पहेली सा है, परंतु मनोवैज्ञानिक दृष्टया विचार करें तो उसे स्वाभाविक ही समझा जाएगा। क्योंकि जिस तरह हजारों साल से स्त्रियों को गढ़ा गया है वैसे ही हजारों साल से पुरुषों को भी तो गढ़ा गया है। लाख पढ़-लिखलें, लाख वैज्ञानिक सोच को विकसित करलें, सैंकडों वर्षों सें उनके भीतर पितृसत्ताक समाज द्वारा विकसित जो पुरुष अहम् है, जो सामंतवादी सोच है, उसे दूर होने में कुछ तो समय लगेगा। अतः राजेन्द्रयादव और मैत्रेयीजी की नजदीकियाँ (भावात्मक और साहित्यिक ही सही) डॉक्टर साहब के मनमें शंका-कुशंका के वर्तुलों की सृष्टि करते रहते हैं। डॉक्टर साहब बेचारे क्या करे उनके भीतर भी एक द्वंद्व निरंतर चलता ही रहता है। इस द्वंद्व के चलते वे राजेन्द्रयादव की फोटो को तोड़ते भी रहते है। "रेणुजी" के प्रति उस प्रकार का इर्ष्याभाव नहीं है क्योंकि वे दिवंगत हो चुके हैं। परंतु राजेन्द्र यादवरुपी "यह बूढ़ा" उनकी नैया को गर्क करता रहता है। प्रस्तुत

अध्यायमें मैत्रेयी और डॉक्टर साहब के बीच की इन लड़ाइयों का और उनके दांपत्य में निर्मित होती दरारों का वर्णन हम देख सकते हैं । तो दूसरी तरफ मन्नूजी और राजेन्द्रयादव के संबंधों में भी कड़वाहट आ जाती है । यहाँ तक कि दोनों एक दूसरे से अलग हो जाते हैं और राजेन्द्रयादव को "हौजखासवाला" मकान छोड़कर "मयूरविहार" जाना पड़ता है ।[74] परंतु यहाँ एक अनल गौन यह होता है कि भारतीय समाजमें जहाँ स्त्री को निकाला जाता है, यहाँ स्त्री द्वारा एक पुरुष को निकाला जा रहा है । यह मन्नूजी की आर्थिक निर्भरता के कारण ही हुआ है । यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा । राजेन्द्रयादव और मन्नूजी के दांपत्य में यह जो खाई निर्मित हुई उसके पीछे राजेन्द्रयादव के कौन सी स्त्री के साथ के संबंध है वह यहाँ स्पष्ट नहीं हुआ है । डॉक्टर साहब एक स्थान पर कहते हैं कि उनके सामने उनके दांपत्य की जो तस्वीर आई है वह एक पक्ष है, मैत्रेयीजी द्वारा बताया हुआ पक्ष । परंतु वे उसके दूसरे पक्ष को जानते हैं जो मन्नूजी के कारण उनके सामने आया है । परंतु स्पष्टरुप से कोई बात ऊभर कर आती नहीं है ।

प्रस्तुत अध्यायमें मैत्रेयीजी ने "कर्नल स्लीमेन की पुस्तक" "अमीरअली ठग की आत्मस्वीकृतियाँ" तथा डॉक्टर रांगेयराघव के नटों पर लिखा उपन्यास "कब तक पुकारुँ" का जिक्र किया है । इनके अतिरिक्त हावर्डफास्ट, दोस्तोंवस्की, टोलर्स्टाय मराठी-साहित्यकार आनंद यादव, स्टीफन-ज्विग आदि के उल्लेख भी मिलते हैं । वर्जीनिया वुल्फ का भी जिक्र लेखिका ने किया है । "पाकीजा" की बात भी आई है । गोवा विश्व विद्यालय के प्रोफसर एवम् विभागाअध्यक्ष डॉ.रोहिताश्व के कार्यक्रम का उल्लेख हुआ है । उस कार्यक्रम में मैत्रेयीजी को राजेन्द्र यादव के साथ गोवा जाना था परंतु पति के दोहरे व्यवहार के कारण वह उस कार्यक्रम में नहीं जाती । जबकि डॉक्टर साहब "एर" की टिकिट भी निकाल लाये थे ।[75]

प्रस्तुत अध्याय में अरविंदजैन, गिरिराज, केदारनाथसिंह आदि के भी उल्लेख मिलते है। "हौजखास" का मकान छोड़कर राजेन्द्रजी मयूरविहार जिस फ्लेट में जाते हैं। वह फ्लेट केदारनाथसिंह का हैं। यहाँ प्रकारांतर से मैत्रेयीजी ने कालीदास की शकुंतला को भी याद किया है। अंतर यह है कि वहाँ शकुंतला पितृगृह छोड़कर जा रही थी, यहाँ पर डॉ.राजेन्द्र यादव अपना मकान छोड़कर जा रहे थे।[76] राजेन्द्रयादव और मन्नूजी के दांपत्य जीवन की फलश्रुति के रुप में उनकी बेटी रचना है उसका भी उल्लेख प्रस्तुत अध्यायमें आया है। मैत्रेयी तथा डॉक्टर साहब मिलकर उनके नए फ्लैट में जरुरी सामान रखवा देते हैं। एक स्थान पर राजेन्द्रयादव यह भी कहते हैं कि उस मकान में सबसे पहला प्रवेश मैत्रेयीजी का हो।[77] इस प्रकार यहाँ बहुत सी स्थितियाँ कबीर ऊल्टबासी की भाँति अस्पष्ट सी है। अध्याय के ये वाक्य बहुत कुछ कह जाते हैं – "मैं इस बात पर क्या कहती? सारा राज खुल चुका था। राजेन्द्रयादव का डॉक्टर साहब क्या बिगाड़ सकते थे। कटघरे में मुझे खड़ी कर दिया। मैंने बस इतना ही कहा – जवाब मांग रहे हो, बोलने का मौका दे रहे हो, तो बस इतना ही कहूँगी, लोग प्रशंसा देते हैं, प्यार करते हैं, धन-दौलत भी दे सकते हैं, मगर ऐसे विरले ही होते हैं। जो सच्चा भरोसा देते हैं।[78]

प्रस्तुत अध्यायमें लेखिकाने अपने नेपाली-नौकर शिब्बूका भी उल्लेख किया है। मैत्रेयी शिब्बू को अपना बेटा मानती है और शिब्बू भी मैत्रेयी के साथ एक बेटे की तरह उनका सहायक बनता है। अध्याय के प्रारंभ में ही "अल्मा कबूतरी" के प्रकाशन पर जो लेखकों, समीक्षकों की मिली-जुली समीक्षाएँ थीं उसका भी वर्णन किया है। राजेन्द्रयादव "अल्माकबूतरी" को मैत्रेयी के लेखन का एक महत्वपूर्ण मोड़ मानते हैं। जिसने हिन्दी समीक्षकों को अजीब कस्मकश में डाल दिया है।[79] हिन्दी में इस उपन्यास को लेकर समीक्षक दो वर्गों में

विभक्त हो गए हैं। कुछ लोगों की दृष्टि में "अल्मा कबूतरी" मैत्रेयी के लेखन का एक महत्वपूर्ण मोड़ है, जो उनको रांगेयराघव आदि से जोड़ता है तो कलावादी – रुपवादी समीक्षक उसे उतना अच्छा नहीं मानते।

अंतर भीगी आत्मा

"अंतरभीगी आत्मा" अध्याय कुल 12 पृष्ठों में (पृ.301-319) में उपन्यस्त् हुआ है। इसमें लेखिकाने पत्र शैली का प्रयोग किया है। रक्षाबंधन के पर्व पर अचानक डॉ.राजेन्द्रयादव मैत्रेयी जी के यहाँ प्रकट हो जाते है, और अपने राजेन्द्रीय अंदाज में कहते हैं – "डॉक्टरनी राखी ले आओ। हम राखी बंधवाने आयें हैं, क्योंकि और कुछ तो तुम्हारे बस का नहीं।"[80] यहाँ "क्योंकि" के बाद का वाक्य राजेन्द्रजी की बदमाशी को व्यक्त करता है। यह वाक्य बहुत कुछ कह जाता है। प्रस्तुत अध्याय में लेखिकाने "रक्षाबंधन पर्व" के प्रति शैशवकाल से ही उनमें जो ललक थीं उसे बताया है, कारण भी स्वाभाविक है। मैत्रेयी को कोई भाई नहीं था। अतः भाई की कमी का खलना स्वभाविक है। बरअक्स मैत्रेयी की माताजी कस्तूरी की यह सोच है, उनको यह सब सामाजिक ढ़कोसला लगता है। भाई-बहन के संबंधो और पित्तृसत्ता या पतिसत्ता के प्रति विद्रोह का भाव कस्तूरी में दृष्टिगत होता है। यह भी मनोवैज्ञानिक दृष्टया स्वाभाविक ही कहा जाएगा। क्योंकि भाई की ओर से मिले धोखे और पति के परस्त्रीगमन को वह अपनी आँखोंसे ही देख चुकी थी। "कस्तूरी कुण्ड़ल बसै" आत्मकथा में कई स्थानों पर कस्तूरी और गौरा के समलैंगिक संबंधो के संकेत मिलते हैं। यौन मनोविज्ञान के अनुसार "लेस्बियानिजम" उन स्त्रियों में पाया जाता है जो किन्हीं कारणों से स्त्री-पुरुष संबंधो को "घृणाकी" नजर से देखती हैं।[81] शैशव में भाई के लिए जो मैत्रेयी की ललक थीं, उसके कारण कस्तूरी ने

चिढ़कर अपनी सहेली के बेटे "शिवकुमार" को मैत्रेयी का भाई बनवा दिया था। बाद में तो खिल्ली के दादा चीमनसिंहयादव के सभी लड़के भी मैत्रेयी के भाई बनते हैं और आत्मकथाओं में मैत्रेयी ने यह भी स्पष्ट किया है कि चीमनसिंहयादव के बेटोंने ताजिन्दगी सगे-भाइयों के मानिन्द "पुष्पा" को अपनी बहन माना है। इतना ही, नहीं हरदम वे उसकी रक्षाहेतु प्रस्तुत हुए हैं। रक्षाबंधन को लेकर सुभद्राकुमारी चौहान की कुछ पंक्तियों को भी लेखिकाने यह उद्धृत किया है। यह भी संकेतित हुआ है कि "इदन्नमम" में मंदा का जो निवास बताया है वह चीमनसिंहयादव का ही निवास था। जिसे वह लोग कचहरी कहते थे और जिसके बड़े से पक्के रंगीन चबुतरे पर पंचायतें, यहाँ लेखिकाने आगरा-अलीगढ़ के उस विशेष खाने का भी उल्लेख किया है जो होली-दिवाली पर बनता था। जिसमें ब्रज के पकवान, पूरी-कचौड़ी, आलू की सब्जी और सन्नाटा (रायता) आदि होते थे। राजेन्द्रजी आगरा पतूला तेजमिर्च के थे तो डॉक्टर साहब अलीगढ़ के। आगरा और अलीगढ़ पास-पास है। अतः इस प्रकार का खाना दोनों को पसंद है। इसमें लेखिका ने श्रीरामसेंटर "रास" कहानी के मंचन का भी उल्लेख किया है। जिसकी सफलता का श्रेय वह राजेन्द्रयादव को देती है। उस समय भाव-विभोर होकर लेखिका ने यादवजी को गले भी लगाया था।[83] समकालीन लेखिका जयाजादवानी का उल्लेख भी मिलता है। इस अध्याय का दूसरा मुख्य प्रसंग है - 2 अक्तूबर 1993 की वह रात जो कानपुर में पहली "संगमन गोष्ठी" के दौरान लेखिका और राजेन्द्रयादव के बीच गुजरी थी। किसी राष्ट्रीय गोष्ठीमें बोलने का मैत्रेयी का यह पहला प्रसंग था और राजेन्द्रयादव चाहते थे कि लेखन के साथ-साथ मैत्रेयी वक्तारुप में भी स्वयं को सशक्त प्रमाणित करें। गोष्ठी के बाद जहाँ उनको ठहराया गया था वहाँ मैत्रेयी और राजेन्द्रयादव के कमरे आमने-सामने थे, मैत्रेयी ने राजेन्द्र के संदर्भ में "गोड़मधर" और दूसरी लेखिकाओं से जो सुन

रखा था उसके कारण उनके मन में एक भय समाया हुआ था । इस भय के संदर्भ में लेखिका ने "बीस सालबाद" फिल्म का उल्लेख भी किया है। मैत्रेयी जब अपने कमरें की ओर जा रही थी तब राजेन्द्रजी की वैसाखियों की खटखट उनमे एक डर पैंदा कर रही थी । किसी तरह मैत्रेयी अपने कमरें का दरवाजा खोलती है और अंदर चली जाती है, उनके सर में भयंकर दर्द था उसके लिए दवाई लेनी थी, कमरे में पानी नहीं था पानी के लिए कमरा खोलकर एक बार तो राजेन्द्रजी के कमरें को खटखटाने का विचार लेखिका करती है । परंतु हिम्मत नहीं जुटा पाती और सूखे कंठ से और (सरदर्द के साथ पूरी रात गुजार देती है । जिसके कारण दिल्ली जाकर वह बीमार भी पड़ जाती है और उनको I.C.U. में भी रखना पड़ता है । यहाँ लेखिका ने स्पष्ट किया है कि राजेन्द्रजी से उन्हें डर नहीं लग रहा था । परंतु जो कुछ उन्होंने प्रदर्शित किया था, वह लोगों का दिया हुआ डर था । लेखिका को स्वयं यह अंतर्विरोध खलता है कि लेखन में निर्भीक नारी चरित्रों का निर्माण करनेवाली बहादुर लेखिका कितनी डरपोक और कमजोर है । अध्याय के अंतमें "मदनमानव" का भी उल्लेख मिलता है जो बाद में गुंडा हो गया था ।

तन छूटे मन कहाँ समाई

सत्रहवाँ अध्याय "तन छुटे मन कहाँ समाई" 12 पृष्ठो में (पृ.320-321) उपन्यस्त् हुआ है । प्रस्तुत अध्याय में लेखिकाने बाबरी मस्जिद ध्वंस घटना, "छाँह" "फैंसला", आदि कहानियों का जिक्र, मनीषा के आग्रह पर उसके पत्रमें स्तंभ लिखने की तैयारी, उस संदर्भ में (कैकयी, शूपर्नखा आदि के संदर्भ में) लेखिका के अपने विचार, इन पर "आदमी के निगाह में औरत" (डॉ.राजेन्द्रयादव) पुस्तक का प्रभाव, डॉक्टर राजेन्द्रयादव का वह छत्ताछेड़

कथन हनुमानजी के आतंकवादी होने के कथन, सन 2002 तक "कस्तूरी कुंडल बसै" को समाप्त कर लेने का उल्लेख विश्व पुस्तक मेले में उसकी विशेष चर्चा डॉ.अर्चनावर्मा द्वारा स्त्री विमर्श पर हंस का विशेषांक निकालना उसमें स्त्री-विमर्श पर मैत्रेयी से लिखवाने का आग्रह आधुनिक बैंक प्रणाली के कारण किसानों की आत्मकथाएँ, आत्मकथ्य लिखने की दुविधा, दलित लेखकों द्वारा लिखी जानेवाली आत्मकथाओंमें उनके साहस की स्वीकृति, "कस्तूरी कुंडल बसै" में कस्तूरी का नायिकारुप में उभरकर आना, वीरेन्द्रयादव की समीक्षा) खाना बदोश, (अजीत कौर), नंगे पाँवो का सफर, माय फ्यूडल लोर्ड (तहमीनादुरानी) तस्लीमा नसरीन की आत्मकथा के 5 खण्ड़ दोहरा अभिशाप (कौशल्या बैसंत्री) आदि आत्मकथाओं का जिक्र, हैदराबाद से गोरखनाथ तिवारी का पत्र – जिसमें उनका कथन कि उनके प्रोफेसर टी.मोनहसिंह सभी छात्रों से कहते हैं कि मैत्रेयी पुष्पा 20 वीं सदी की सबसे प्रसिद्ध ग्राम्य जीवन पर लिखनेवाली एक मात्र उपन्यासकार है। गोरखनाथजी का निर्णय कि मैत्रेयी की पुस्तकों पर ही पी-एच.डी करेंगे, बेंगलोर, मद्रास, कोल्हापुर, उदयपुर, जयपुर, सूरत, शिमला, लेह तक आदि प्रदेशों और नगरों से देश के कोने-कोने से विद्यार्थियों और विद्वानों की मैत्रेयी के उपन्यासों और आत्मकथा (कस्तूरी कुंडल बसै) सकारात्मक टिप्पणियाँ आदि का उल्लेख मिलता है। दिल्ली विश्वविद्यालय तथा जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय के हिन्दी विषय को पढ़नेवाले तमाम छात्र-छात्राएँ भी अपना पाठकीय समर्थन मैत्रेयीजी को देते रहते हैं। डॉ.मैनेजर पाण्डेय ने हंस "पत्रिका में (कस्तूरी कुंडल बसै) को उत्कृष्ट आत्मकथा घोषित किया है।[84] अपने उपन्यासों तथा कस्तूरी कुंडल बसै के कारण जहाँ सभी कोनोंसे प्रगतिवादी जीवन मूल्यों और सरोकारों से संबंध रखनेवाले पाठकों और विद्वानों द्वारा मैत्रेयीजी का स्वागत हो रहा था वहाँ कुछ फण्डामेन्टालिस्ट प्रकृति के लोगों द्वारा मैत्रेयीजी की निंदा भी हो रही थी

और उनके लेखन को अश्लील करार दिया जा रहा था। एक पत्रिका में तो लेख छपा था – "मैत्रेयी पुष्पा का सेक्स संसार" इन सबके कारण डॉक्टर साहब मैत्रेयी से नाराज और खिन्न रहते है। मैत्रेयी ने "कस्तूरी कुंडल बसै" को डॉक्टर साहब से छिपाकर रखी थी। परंतु अंत में वह साहस कर के डॉक्टर साहब को यह आत्मकथा देती है यथा – "मुझमें तो तुम्हें पुस्तक देने की पहले दिन से ही हिम्मत थी, लेकिन तुम्हारा रवैया देखकर रुक गई क्योंकि तुम में इसे पढ़ने का हौंसला मुझे दिखाई नहीं दिया।" परंतु दो, ढाई दिन के बाद डॉ.साहब ने पूरी पुस्तक पढ़ने के बाद कहा – "चलो घर का कारागार टूट गया (जैसा कि तुमने लिखा है।) अब अर्चनावर्मा को मेरी ओर से शुक्रिया कह दो कि माताजी की कहानी के साथ इसमें हम भी जुड़ते चले गए। और डार्लिंग, स्वीट कीस फोर्म माय साइड कहकर वे मेरे करीं से करीं आते स्पर्श के लाहक में..."[85]

प्रस्तुत अध्याय में लेखिका ने स्पष्ट किया है कि आत्मकथा लिखना उपन्यासों और कहानियों लिखने की तुलना में कितना दुर्घर्ष और कठिन कार्य है। अपने भीतर के नग्न सत्यों को खोलने का साहस सभी में नहीं होता, परंतु मैत्रेयीजी में यह साहस है। इस के कारण एक तरफ इनकी पुस्तकों का स्वागत हो रहा है, वहाँ दूसरी तरफ कुछ लोग उनकी निंदा भी कर रहे हैं और उनको "ओवररेटेड" लेखिका घोषित करते हुए उन्हें दूसरे या तीसरे ग्रेड की लेखिका बता रहे हैं। इस समय हिन्दी जगत में विद्वानों के दो वर्ग है। - एक वर्ग मैत्रेयी को नारी-विमर्श और ग्रामीण लेखन की सशक्त लेखिका मान रहा है तो दूसरा वर्ग उनके लेखनको सामान्य प्रकार का बता रहा है।

हम न मरहिं मारहिं संसारा

"गुड़िया भीतर गुड़िया" का यह अंतिम अठारहवाँ अध्याय का शीर्षक भी कबीर की उलटबासी से ही रखा गया है। – "हम न मरहिं मारहिं संसारा" यहाँ लेखिकाने पाठमें थोड़ा अंतर किया है, "मरहिं के स्थान पर मारहिं" कर दिया गया है जिससे लेखिका को शायद यह अभिप्रेत है कि संसार में लोग नहीं मरते है वस्तुतः संसार द्वारा, लोगो द्वारा उनको मार दिया जाता है। यह अध्याय लगभग 20 पृष्ठों में (पृ.331-352) विन्यस्त हुआ है। उसका प्रारंभ राजेन्द्रयादव के 75 वे जन्मदिवस को (अमृतमहोत्सव) के रुप में मनानेवाले प्रसंग से होता है। इस प्रसंग पर मैत्रेयी पुष्पा अपना जो संक्षिप्त वक्तव्य देती है उसको तोड़-मरोड़कर विकृत किया जाता है। कुछ दिनों के बाद लिखित तूफान के रुप में एक हंगामा खड़ा होता है। मैत्रेयी के घर कुरियर से एक पत्रिका आती है – "प्रथम प्रवक्ता" जिसका विषय था – "आज की औरत मुक्मल जहाँ की तलाश" इसमें मैत्रेयी के कथन को कुछ विकृतरुप में प्रस्तुत किया गया था। चर्चा को आयोजित करनेवाली कोई "साधना" नामक महिला थीं। दरहकीकत "अमृत महोत्सव" वाले सभागार में डॉ.निर्मलाजैन को छोड़कर कोई भी लेखिका उपस्थित नहीं थी। तथापि मृदुलागर्ग चित्रामुदगल, चंद्रकांता, कमलकुमार, नासिरा शर्मा आदि के मैत्रेयी की कटु भर्त्सना करते हुए वकतव्य थे। जिसे पढ़कर मैत्रेयी तिलमिला उठती है। इस विषय पर कमलेश्वर का उत्तर संतुलित एवम् सारगर्भित है – "चुप रहना चाहिए। देखो, साहित्य की दुनिया में विवाद उठते हैं, यह कोई नई बात नहीं। लेकिन नुकशान की बात यह है कि विवाद लेखक को इस या उस गुट से जोड़ देते हैं। इससे रचना-शीलता बाधित होती है। ऊर्जा छीझने लगती है। मेरी बात ध्यान से सुनो मैत्रेयी, समझो कि जिस तरह हम गर्मी में खुद को राहत देने के लिए ठंडी जगह खोजते हैं, पंखा, कूलर का इस्तेमाल करते हैं, सर्दी में खुद को बचाने

के लिए गर्म कपड़े पहनते हैं, उसी तरह रचनात्मकता को बचाने के लिए, मन के मौसम को संतुलित रखना होगा ।"[86] कमलेश्वरजी की सलाह अनुसार मैत्रेयी स्वयं को नियंत्रित करने का यत्न करती है । परंतु वह सर्वाधिक आहत होती है मन्नू भंण्डारी के वकतव्य पर । बाद में मन्नूजी फोन पर मैत्रेयी से कहती है – "मैत्रेयी, हो सकता है मैं भूल गई हूँ । बीमारी के कारण परेशान रहती हूँ ।"[87] इस पूरे प्रकरण में एक बात यह भी ध्यानार्ह रहनी चाहिए कि मैत्रेयी की कटु आलोचना करनेवाली लेखिकाएँ का एक विशिष्टवर्ग की हैं जिनको कदाचित मैत्रेयी के बढ़ते कद से ईष्या हो रहीं थी । कुछ ही वर्षो में मैत्रेयी एक सशक्त नारी लेखिका के रुप में उभर रहीं थी । शायद कइयों को खटकने लगा था । अन्यथा आयोजिका महोदय ने कृष्णासोबती, अनामिका, क्षमाशर्मा रोहिणी अग्रवाल जैसी लेखिकाओं को उस परिचर्चा में शामिल क्यों नहीं किया? यहाँ यह बात ध्यान रहनी चाहिए कि लेखक, लेखिकाएँ कोई देवी, देवता नहीं होते उनकी अपनी जरुरतों के हिसाब से उनमें भी उदारताऐं सदभावनाऐं कुंठाएँ और कभी-कभी कच्ची हरकत भी मिल सकती है । रामचंद्र शुक्ल, रामविलास शर्मा, नामवरसिंह के नाम पर हम उन्हें ऐसे देखते हैं जैसे उनका लिखा / बोला वेद वाक्य हो, सत्य और अमर अजर । डॉ.निर्मलाजैन से बड़ी कोई समीक्षक महिला नहीं, जो कह दे पत्थर सी लकीर मगर, आज का नया साहित्य अनेक नई चुनौतियों को लेकर आता है । मैत्रेयी का यह कथन बड़ा सारगर्भित है – "पत्थर की लकीरें पानी के बल-बुलों में कब डूब जाएँ, वह भी नहीं जानते । स्थापित व उभरते समीक्षक अपने कद में डॉ.मैनेजरपांडेय हो, डॉ.विजय बहादुरसिंह, वीरेन्द्रयादव, मधुरेश के साथ रोहिणी अग्रवाल की प्रखरता अपने आप में कम तो नहीं । डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव का ज्ञान क्षीण तो

नहीं हुआ, भले पक्षपात का आरोप लगता रहे । वह लोग आज के साहित्य को ठीक तौल रहे हैं ।[88]

यहाँ हम यह देखते हैं कि समीक्षकों का एक वर्ग जहाँ मैत्रेयी को एक सशक्त लेखिका मानता है । वहाँ कुछ लोगों की निगाह में मैत्रेयी का इधर का साहित्य सामान्य प्रकार का है। यथा निर्मलाजैन का यह कथन "इदन्नमम्" और "गोमा हँसती है" से उसने अच्छी शुरुआत की थी लेकिन आजकल स्त्री विमर्श में खुलीं खिड़कियोंसे, जिस तरह की बातें करती है । उसके लेखन में कोई दम नहीं । बल्कि कहना चाहिए कि "कस्तूरी कुंडल बसै" और अभी-अभी प्रकाशित "कहीं इसुरी फाग" उपन्यास के नाम पर धोखा है । वैसे मेरा संवाद मन्नू भण्डारी से तो हो सकता है, लेकिन मेरी दृष्टि में मैत्रेयी ऐसी बड़ी लेखिका नहीं जिसके लेखन पर में टिप्पणी करुँ ।"[89]

कमलेश्वरजी की तरह ही राजेन्द्रयादव ने भी कहा था – "डॉक्टरनी आज समझ लो और हमेशा के लिए गाँठ बाँध लो, जो ऊलू-जलूल बक रहे हैं, वे तुम्हारे प्रतिद्वन्द्वी हैं । उन्हें न तुम्हारे रुप-रंग से कुछ लेना-देना है न तुम्हारे और मेरे सम्बन्धों की पड़ताल से । उन्हें बस भय है तुम्हारे लेखन से । और धुँआंधार अनवरत लेखन से.... । मैत्रेयी हम जिसको लाख कोशिश के बाद भी अपने काबू में नहीं कर पाते, उसके बारे में झूठी-सच्ची कहानियाँ प्रचारित करते हैं । स्त्री हो तो उसको अश्लील और बदचलन कहना बड़ा आसान हो जाता है । तुम लिखने से बाज नहीं आओगी और नए बिंदु तलाशती जाओगी तुम्हारी "सहेलियाँ" तुम्हें जिन्दा न छोड़ें तो ताजुब्ब क्या है? "सुन रही हो न?"[90]

इस प्रकार प्रस्तुत अध्यायमें मैत्रेयी पुष्पा को लेकर लेखिकाओं के एक वर्ग में जो ईर्ष्याप्रेरित विरोध को दर्शाया गया, वहाँ लेखिका उनके कारण

अपराधबोध से मुक्त होकर आगे के मोर्चे के लिए तैयार होती हुई दृष्टिगोचर होती है । अध्याय के अंत में "फोर्टिस" अस्पताल वाला प्रसंग है । जिसमें राजेन्द्रयादव का ओपरेशन होना था । मैत्रेयी पर राजेन्द्रयादव का फोन आता है – डॉक्टरनी ओपरेशन होने जा रहा है । तुम्हें मालूम है । मैं तैयार कर दिया गया, लेकिन यहाँ ओपरेशन के लिए अपनी कंसेंट (रजामन्दी) देनेवाला कोई नहीं । इस लिए अब यह काम तुमकों ही करना होगा डॉक्टरनी ।"[91] इस पर मैत्रेयी के पति महोदय डॉक्टर साहब की टिप्पणी है – "क्या बुढ्ढा अस्पताल में भी तुम्हें बुला रहा हैं?[92] यहाँ मैत्रेयी थोडे से झूठ का सहारा लेती है और कहती है मुझे नहीं बल्कि आपको बुला रहे हैं राजेन्द्रयादव । उसके बाद लेखिका का आत्मविश्लेषण – क्यों बोली में ऐसा? सचकी जगह झूठ क्यों बोली? किसके साथ न्याय करे? किसे धोखा दिया? में तिकड़म कर गई? फिर उसका प्रत्युत्तर भी मैत्रेयी स्वयं देती है – "जो भी हुआ यही मेरी जिंदगी का रुप है । यही सम्बल है, यही जीवन का आधार... "त्रियाचरित्र" कहो तो कह सकते हो । इस पौराणिक शब्द को मैं ने गाली नहीं माना । इसे में (सर्वाईवल ऑफ फिटेस्ट) मानती हूँ । जिंदगी को बचाकर रखने का तरीका ।[93] यादवजी के ओपरेशन के लिए डॉक्टरसाहब अपना कंसेट देते हैं और फिर ओपरेशन संपन्न होता है । अध्याय का अंत, और "गुड़िया भीतर गुड़िया" का भी अंत इन वाक्यों से होता है – मैं कहाँ से कहाँ तक पहुँच गई । इस जगह को क्या नाम दूँ? शीश झुकाऐं हुए प्रार्थना बस । क्योंकि कितनी-कितनी दुआएँ कबूल हुई... क्या पाया और हमारा क्या-क्या नष्ट हुआ सब कुछ इस कहानी में है । अब हम वैसे कहाँ रहे, जैसे कि हुआ करते थे । सम्भवतः यही रचनात्मक जीवन दृष्टि है । और यही है साहित्य की शक्ति ।"[94]

"गुड़िया भीतर गुड़िया की विश्लेषणात्मक विवेचना"

मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा का यह दूसरा भाग है । इसमें निम्नलिखित अड्डारह अध्याय हैं – (1) काहे री नलिनी तू कुम्हलानी (2) तेरा झूठा-मीठा लागा (3) जो पै पिय के मन नहिं भायी (4) एक सुहागिन जगत पियारी (5) जियरा फिरे उदास (6) धिय सबै कुल खोयो (7) तृषांवत जो होयगा (8) मोरा मन मतबारा (9) अखियाँ जान सुजान भई (10) कहूँ रे जो कहिबे की होय (11) मच्छी रुखां चढ गई (12) काजल केरी कोठरी (13) पति संग जागी सुन्दरी (14) यह तन जारों मसि करों (15) धरती बरसै, अम्बर भीजै (16) अन्तर भीगी आत्मा (17) तन छूटे मन कहाँ समाई (18) हम न मरहिं मारहिं संसारा । ध्यान रहें कुरुक्षेत्र का युद्ध भी 18 दिन ही चला था । मैत्रेयीजी की यह आत्मकथा किसी कुरुक्षेत्र से कम नहीं है । जिस प्रकार कुरुक्षेत्र में अपने ही अपनों के सामने लड़े थे ठीक उसी तरह यहाँ पर मैत्रेयी को अपने ही (Nearest and dearest) लोगों से टकराना पड़ा है । जिस तरह वहाँ मोहभंग हुआ है, यहाँ भी कुछ परिस्थितियों में मोहभंग हुआ है । जिस तरह वहाँ कुछ छल छद्मों से काम लिया गया था, यहाँ भी कुछ छल छद्मों से काम लिगा गया हैं । जिसे लोग "त्रिया-चरित्र" कह सकते हैं । पर इसे मैत्रेयी का साहस ही कहना चाहिए कि उन सबको यहाँ साफ-साफ तरीके से उजागर कर दिया है, उसे उजागर करने के खतरों का पुर्णरुपेण बोध होते हुए प्रायः लोग सुविधाजनक स्थितियों को बचा ले जाते हैं । मैत्रेयी ने कुछ बचाया ही नहीं है, डॉक्टर साहब और मैत्रेयीजी के संबंध टूट सकते थे । परंतु उसका भी खतरा उठाते हुए मैत्रेयीजी ने यह आत्मकथा लिखी है । इस प्रकार का साहस कुछ ही लोग कर सकते हैं । जिनमें प्रभा-खेतान, कृष्णासोबती, अमृताप्रीतम, तस्लीमा नसरीन, तहमीनादुरानी, मन्नू भंण्डारी आदि – आदि । अब इस पंक्ति में मैत्रेयी पुष्पा का

नाम भी जुड़ गया है। अध्यायों के शीर्षक काव्यात्मक है। जिनको प्रायः कबीर के पदों या साखियों से लिया गया है। जिससे ज्ञात होता है कि कबीर मैत्रेयी के पसंदीदा कवियों में रहें होगें। इससे भी मैत्रेयीजी. के आंतरिक व्यक्तित्व को आँका जा सकता है। मैत्रेयीजी शुरु में कुछ भावनात्मक प्रकारकी कविताएँ, लेख एवम् कहानियाँ लिखती रही है। परंतु उनकी प्रतिभा को पहचानते हुए, डॉ. राजेन्द्र यादव उनके लेखन की दिशा को ही मोड़ दिया है। अनेक स्थानों पर मैत्रेयीजी ने इस बात का स्वीकार किया है कि डॉ.यादव के दिशानिर्देश के कारण ही उनके लेखन में आमूल परिवर्तन आया है। गुजराती का एक मुहावरा है – "आंगळी चिंध्यानु पुण्य" अर्थात् अंगुली निर्देश करने का, रास्ता बताने का पुण्य। तो यह पुण्य कर्म डॉ.यादव ने किया है। मैत्रेयीजी के उपन्यासों और कहानियों में बुंदेलखण्ड़ का ग्रामीण जीवन, उसके यथार्थ स्वरुप में चित्रित हुआ है। इस संदर्भ में फणीश्वरनाथ रेणु उनके आदर्श रहे हैं। रेणु और राजेन्द्रयादव की तस्वीरें वह अपने घर में रखती हैं और इन दोनों के प्रति भक्तिभाव या पूज्यभाव मैत्रेयीजी में रहा है। इस हद तक कि कई बार उनके पति डॉ.साहब को इन दोनों की ईष्या भी होती रही है। रेणु तो दिवंगत हो गए, परंतु राजेन्द्रयादव तो जीवित है। अतः कई बार पतिसाहब की दृष्टि का कोपभाजन हुए है और उनके फोटो को चूर-चूर किया गया है। पर फिर क्रोधावेश के समाप्त होने पर वे ही डॉ.साहब उस फोटों को फिर से जुड़वा भी लाए हैं और ऐसा एक बार नहीं अनेक बार हुआ है। जिस प्रकार का संतुलन मैत्रेयीजी के लेखन में है, ठीक उसी प्रकार का संतुलन डॉ.साहब में हमें दृष्टिगोचर होता है। शायद यही संतुलन है जिसके कारण मैत्रेयी पुष्पा और डॉक्टर साहब का दांपत्यजीवन साबूत रह पया है। अन्यथा अनेक बार ऐसी-स्थितियों का निर्माण हुआ है, जिनके चलते उनका विवाह – विच्छेद हो सकता था।

"गुड़िया भीतर गुड़िया" आत्मकथा है। पर लेखिका ने आत्मकथा के A to Z वाली क्रमक्रिता को न अपनाते हुए औपन्यासिक शिल्प को अपनाया है। फलतः प्रथमतया कई लोगों को "कस्तूरी कुंडल बसै" और "गुड़िया भीतर गुड़िया", उपन्यास ही लगे थे। कइयों ने उनका उपन्यास के रुप में उल्लेख किया था। प्रतिष्ठित आलोचक डॉ.निर्मलाजैन ने विरोधी स्वर में भी सही कहा है – "बल्कि कहना चाहिए कि "कस्तूरी कुंडल बसै" और अभी-अभी प्रकाशित "कहीं ईसुरी फाग" उपन्यास के नाम पर धोखा है।[95] अभिप्राय यह कि निर्मलाजैन भी "कस्तूरी कुंडल बसै" को "उपन्यास" ही कह गई है। जबकि "कस्तूरी कुंडली बसै" मैत्रेयी की आत्मकथा का प्रथम भाग है। जिन लोगों को मैत्रेयीजी के संदर्भ में, उनके सगे रिश्तेदारों के संदर्भ में उनके माता-पिता के नामों के संदर्भ में तथ्य मालूम ना हो और वे यदि इस किताब को पढ़े तो निर्मला जैन की भाँति वह भी उसे उपन्यास ही मानते। इस प्रकार आत्मकथा में उपन्यास का सा रस था आनंद प्राप्त होता है। इसे भी मैत्रेयी की सफलता ही कहना चाहिए। मैत्रेयी ने इन दो आत्मकथाओं को आत्मकथा की विधा के रुप में लिखा है। परंतु उन्होंने "शिल्प" उपन्यास का लिया है। इस लिए अनेक स्थानों पर उसमे पूर्वदीप्ति के सहारे आगे की घटना पीछे और पीछे की घटना आगे हो गई है। कहीं पर वो "इदन्नमम" और "चाक" के लेखन की बात कर रही है तो कहीं किसी शब्द या प्रसंग को लेकर वह अपने अतीत में चली गयी है और लेखिका होने से पहले की घटनाओं का उल्लेख करने जाती है। कहीं पर उल्लेख मिलता है कि उनकी बेटियाँ जवान हो गई हैं। डॉक्टर बन गई हैं और फिर तुरंत इस के बाद स्मृतियों के सहारे वह उस लोक में पहुँच जाती है जहाँ वे छोटी बच्चियाँ है, या उनका जन्म भी नहीं हुआ है। शिल्प की भाँति भाषिक संरचना भी उनकी उपन्यास के अति अनुकूल है। जो भी हो, ये दोनों आत्मकथाएँ मैत्रेयी पुष्पा के लेखन की पृष्ठभूमि को जानने के लिए अत्यंत

उपयोगी संदर्भ ग्रंथ प्रमाणित हो सकते हैं । मैत्रेयी के समय की सामाजिक, राजनैतिक, साहित्यिक परिस्थितियाँ भी सामने आतीं हैं । इन दों आत्मकथाओं का जो समय है । उसमें स्वाधीनता पूर्व के अंग्रेजो के जुल्मीशासन से लेकर स्वाधीनता के उपरांत सन् 2002 "गोधरा कांड तक की" घटनाओं को समेकित किया गया है । अंग्रजों के शासन में लगान के लिए किस प्रकार किसानों को कोड़े से पीटा जाता था उसके कई हदयद्रावक चित्र "कस्तूरी कुंडल बसै" में मिलते हैं पर पूर्वदीप्ति की पध्धति के कारण "गुड़िया भीतर गुड़िया" में कहीं उनका चित्रण मिल जाता है । मैत्रेयीजी की माताजी "कस्तूरी" को वस्तुतः लगान की रकम चुकाने के लिए ही बेचा गया था। अवांछित स्थितियों में विवाह के कारण कस्तूरी अपने वैवाहिक जीवन से संतुष्ट कभी नहीं रहीं । इसका जिक्र "गुड़िया भीतर गुड़िया" में भी मिल जाता है। स्वाधीनता के उपरांत देश में किस कदर भ्रष्टाचार का बोलबाला हुआ और किस तरह गलत और अनैतिक कार्य करनेवाले लोग "नवधनिक" वर्ग में तबदील होते गए । उसका यथार्थ वर्णन इन आत्मकथाओं में उपलब्ध होता है । कस्तूरी की पीढ़ी गांधीवादी वातावरण की पीढ़ी है । जिसमें कुछ नैतिक जीवन मूल्य और जीवनादर्श थे। प्रगतिवादी जीवनमूल्य थे । स्वतंत्रता के उपरांत इस पहिये को आगे बढ़ना चाहिए था । परंतु उसके विपरीत हुआ है । अतः कई बार लगता है कि वह पुरानी पीढ़ी वर्तमानपीढ़ी की तुलनामें अधिक प्रगतिवादी थीं । स्वतंत्रता के बाद तो शायद हर क्षेत्र में पीछेहट हो रही है । विज्ञान और प्राद्योगिकी के कारण विकास होता हुआ दिख रहा है पर जल, जमीन और जंगल की लड़ाइयाँ तो अभी भी चल ही रही हैं । सांप्रदायिक भावनाएँ पहले की तुलना में और अधिक पनप रही हैं । कुछ लोग संकुचित सांप्रदायिक भावनाओं को भड़काकर अपने स्वार्थ की रोटियाँ सेकने में सफल भी हो रहे हैं । पंड़ित जवाहरलाल नेहरु, लालबहादुरशास्त्री, इंदिरागांधी से लेकर इधर के प्रधानमंत्रियों तक के हवाले

हमें इन आत्मकथाओं में प्राप्त हो रहे हैं । यह भी एक दिलचस्प तथ्य है कि समय-समय पर लेखिका ने उन फिल्मों के नाम भी दिए हैं जो कभी प्रचलित रही हैं । और इस प्रकार फिल्मों के जरिए भी एक समययात्रा तय हो रही हो ऐसा प्रतीत होता है ।

"कस्तूरी कुंड़ल बसै" मेत्रेयी की आत्मकथा और कस्तूरी की जीवनी सी पतीत होती है । कई आलोचकों को और सहदृय पाठकों के मतानुसार कस्तूरी का चरित्र का मैत्रेयी पुष्पा से भी ज्यादा दमदार लगत है । ऐसा लगता है कि कस्तूरी के चरित्र में नारीवाद के अभिलक्षण मिलते हैं । पश्चिम का नारी मुक्ति आंदोलन, वहाँ की "सिमोन बुआ" सरीखी नारीवादी लेखिकाओं के विचारोंसे कस्तूरी के विचार बहुत मेल खाते हैं । उसके मन में पुरुषों और मर्दवादी वर्चस्व के प्रति धृणाभाव है । वह सोचती है कि लड़कियों को पढ़-लिखकर अपने पैरो पर खड़े होना चाहिए । ठीक "अन्यासे अनन्या" की "अम्मा" की तरह । प्रभा खेतान की अम्मा प्रभा और गीता से कहती थी कि तुम लोग भी शब्द पढों लिखो और रुपिया कमाओ ।[96] कस्तूरी भी चाहती थीं कि मैत्रेयी पढ़-लिखकर अफसर बने । उसे ज्यादा पढ़ने का मौका नहीं मिला । अतः थोडा-बहुत पढ़कर सरकारी नौकरी में लग गई । परंतु वह चाहती थी कि उनकी बेटी उससे भी आगे बढे । पर प्रायः देखा जाता है कि संतानो में अपने माँ-बाप के प्रति प्रतिक्रिया का भाव मिलता है । कस्तूरी विवाह संस्था से जितनी घृणा करती थी, मैत्रेयी में विवाह के लिए उतनी ही ज्यादा ललक भी । यौन समानता भी उसमें पहले से आ गई थी और वह चाहती थी कि किसी अच्छे लड़के से विवाह कर के घर-गृहस्थी बसाये । माँ की भाँति वह पुरुषोंसे नफरत नहीं करती थी बल्कि सुदर्शन पुरुषमूर्तियाँ उसे लुभाती थीं । इतना जरुर है कि वह दान-दहेज देकर विवाह नहीं करना

चाहती थी, वह चाहती थी कि उसकी अपनी योग्यताओं शिक्षादिक्षा के आधार पर लड़का उसे स्वीकार करे । मैत्रेयी स्त्री-पुरुष बराबरी और दोस्ती में विश्वास करती है । मर्दवादी वर्चस्व उसे भी पसंद नहीं है । और सद्भाग्य से उन्हें डॉक्टर शर्मा के रुप ऐसा पति मिल जाता है जो दान-दहेज के स्थान शिक्षाको प्रमाणपत्रों को अहमियत देते हैं जो कुंडलिनी नहीं सर्टीफिकेटों में विश्वास रखते हैं । "गुड़िया भीतर गुड़िया" में अनेक स्थानों पर हम देखते हैं कि मनभेद होते हुए भी डॉ.साहेब मैत्रेयी के साथ अनुकूलन बना लेते हैं । आत्मकथामें सैकड़ो बार मैत्रेयी के लिए "जानम" संबोधन आया है । जिससे प्रतीत होता है कि मैत्रेयी की बहुत सी बातों को नापसंद करते हुए भी वे उन्हें तहेदिल चाहते हैं । एकबार पहले मनाकर देते हैं । परंतु आखिर कार होता वही जो मैत्रेयी चाहती है । स्मृति में एक शेर क्रौंध रहा है -

"बस यूँ ही कहा था, ज़रा तुमने
बात तेरी सदा मनमानी हुई
एक राजा हुआ एक रानी हुई"[97]

ठीक उसी तरह डॉक्टर साहब कई बातों में मैत्रेयी पर बरसते रहे पर अंततः वही हुआ जो मैत्रेयी चाहती थी । मैत्रेयी को मैत्रेयी बनाने में डॉ.साहब के योगदान को भी नकारा नहीं जा सकता । मैत्रेयी पुष्पा एक सशक्त नारी – विमर्श की लेखिका के रुप में बुंदेलखण्ड़ के ग्रामीण जीवन के सशक्त चितेरे के रुप में उभरकर आयी उसमें कई-कई लोगों का योगदान है । प्रथमतः मैत्रेयी की अपनी प्रतिभा जीवनानुभवों की पूंजी और स्मृति । द्वितीयतः मैत्रेयी की बैटियों की चाह थी, उनकी मम्मी कुछ ऐसा लिखे कि जिससे उनको "नाम और दाम" दोनों मिले । तृतीयतः "लिज लिजी छायावादी भावनाओं के खोल से बहार निकालकर यथार्थवाद के राजमार्ग पर ले आने का श्रेय हंस संपादक

डॉ.राजेन्द्रयादव को जाता है । चर्तुथतः डॉ.साहब की वह संतुलन साधने की क्षमता, पंचमतः मेडम इल्माना की प्रेरणा तथा मन्नू भंण्डारी से मिलना, षष्ठतः छात्रजीवन का मैत्रेयी का वह प्रेमी जिसने उनको प्रेम पत्र लिखा था । यह प्रेमपत्र भी मैत्रेयी के लेखन की नीव को पुख्ता करनेवाला है । इस प्रकार मैत्रेयी को लेखिका बनानेवाले कई आयाम हैं । पर इन सब में कहीं न कहीं कस्तूरी भी है जो चाहती थी कि उनकी बैटी बड़ी अफसर बने, भले अफसर न बनी पर साहित्य की दुनियाँ में अपना विजयकेतु फहराकर अपनी माता कस्तूरी को सच्ची श्रद्धांजलि देती है ।

पूर्ववर्ती अध्याय में मैत्रेयीजी की आत्मकथाओं के संदर्भ में डॉ.विभूति नारायणराय के कथन को लेकर जो बवंडर उठा था उसका जिक्र हम कर चुके है । डॉ.रायकी बडी ही कुत्सित, अश्लील और अभद्र टिप्पणी थी कि इधर लेखिकाओं में इसकी होड़ मची है कि कौन कितनी बड़ी "छिनाल" है । और यह भी कहा था कि आत्मकथा का नाम "कितने बिस्तर कितनी बार" होना चाहिए ।[98] बाद में लेखिकाओं द्वारा विरोध होने पर डॉ.राय ने "छिनाल" शब्द की व्युत्पत्ति छिन्न+नाल से बताते हुए उस पर लीपा-पोती करने का प्रयत्न भी किया, पर उस दूसरी टिप्पणी का क्या? अब इन दोनों आत्मकथाओं को साधन्त देख जाने पर अधिकार पूर्वक में कह सकती हूँ की मैत्रेयी ने अपनी आत्मकथा "गुड़िया भीतर गुड़िया" में ऐसे किसी प्रसंग का उल्लेख नहीं किया, जिससे उनके चरित्र को लांछित किया जा सके, बल्कि ऐसे कई प्रसंगों में वह स्वयं को बचा ले गई है । उसका ज्वंलत उदाहरण तो कानपुरवाली वह गोष्ठी है जिसमें भयंकर सिरदर्द होते हुए पानी न होने के कारण वह गोली नहीं ले सकी । क्योंकि सामने के कमरे में डॉ.राजेन्द्रयादव को ठहराया गया था । मैत्रेयी एक बार अपने कमरे में बंध हो जाती है । फिर उसे खोलने का साहस तक नहीं कर पाई है जिसके कारण बाद में वह, बीमार भी पड जाती है और उनको

आई.सी.यु. में भर्ती भी कराना पडता है।[99] यहाँ लेखिकाने अपनी टिप्पणी भी दी है – "यदि मुझे सच बोलने का मौका दिया जाए तो कहूँगी कि राजेन्द्रजी मुझे आपसे डर नहीं लग रहा था। जो कुछ मैं ने प्रदर्शित किया, वह लोगों का दिया हुआ ड़र था।[100] सह सम्पादक वाले प्रसंग में भी वही चार्तुयपूर्ण ढ़ंग से अपना बचाव कर ले जाती हैं और सबसे बड़ी बात यह है कि पैंतालिस साल के बाद मैत्रेयी तीन-तीन बैटियों के जवान होने पर उनके ही आग्रह से लेखन के क्षेत्रमें आई थी। उम्र का यह पड़ाव, डॉ. राय ने जिस प्रकार लिखा है, उस प्रकार का तो कतई, कतई नहीं हो सकता है। आत्मकथा में मैत्रेयी के छात्र-जीवन के और वैवाहिक जीवन के बाद के डॉ.सिद्धार्थवाले प्रसंग की बात करें तो इन सभी प्रसंगोमें कहीं भी शारीरिक स्तर पर स्खलन की कोई बात नहीं है। पुराने जमाने की बात और थी जब 10-12 साल की उम्र में लड़की की शादी कर दी जाती थीं और समग्र जीवन पति-परमेश्वर की सेवा मे व्यतीत होता था। पर आज जब लडकियाँ पढ़ने लगी है। महा-विद्यालय और कोलेजों में जाने लगी और उनकी शादियाँ 25-30 साल की उम्र के बाद होती है तो कोई भी सुशिक्षित महिला प्रमाणिकता से यह नहीं कह सकती की उसका पति ही वह पहला पुरुष है जो उसके जीवन में आया हो। क्योंकि भावनात्मक स्तर पर उसके पूर्व भी कई-कई लड़के उसके जीवन में आ चुके होते हैं। मैत्रेयी के जीवन में भी आये हैं, ये केवल "भावनात्मक लगाव" है। शरीर तो पूर्णरुपेण मैत्रेयी ने अपने पति को ही दिया और ताजिंदगी उसका निर्वाह भी किया है। इसे मैत्रेयीजी का साहस, ईमानदारी और प्रमाणिकता ही कहना चाहिए कि उन्होंने विवाह पूर्व के प्रणय प्रसंगों का वर्णन किया है।

डॉ.सरजूप्रसाद मिश्र ने मैत्रेयी की आत्मकथा "गुड़िया भीतर गुड़िया" के संदर्भ में कहा है – "गुड़िया भीतर गुड़िया" शीर्षक पढ़कर आत्मकथा साहित्य

के पाठक को अंग्रेज कवि "स्टीकन पेंण्डा की आत्मकथा "दुनियाँ भीतर दुनियाँ" (World within World) के शीर्षक का स्मरण हो जाता है। एक नारी के अंदर कई नारियाँ मौजूद होती है। वह पत्नी भी है और लेखिका भी। पत्नी पर पड़नेवाले प्रभावों से लेखिका अप्रभावित नहीं रह सकती। यही बात "मन्नू भंण्डारी" ने अपनी आत्मकथा "एक कहानी यह भी" में बड़ी सिद्दत के साथ कही है। पत्नी जब लहू-लुहान हुई तो लेखिका भी घायल हो धीरे-धीरे निष्क्रिय हो गई। मैत्रेयी के साथ ऐसा नहीं हो पाया क्योंकि उसके पति संकट में उसे सहारा देते हैं। दोनों के बीच गल्त फहमियाँ होती हैं लेकिन दूर भी हो जाती है।"[101]

डॉ.शर्मा जब अलीगढ़ से दिल्ली एम्स में आ जाते हैं तब वे भी एक प्रकार के दोहराव से गुजरते हैं। ग्रामीण संस्कारोंवाली मैत्रेयी जब पति के साथ राजधानी दिल्ली में पहुँचती है। तब स्वाभाविकतया डॉ.शर्मा चाहते हैं कि उनकी पत्नी आधुनिक बने। दूसरी तरफ वह उस पर नियंत्रण का कसाब भी बराबर बनाए रखते हैं। यह स्थिति अंधेरे बंध कमरे के "हरवंश" जैसी है। हरवंश अपनी पत्नी निलिमा को मोडर्न बनाने के लिए उसके भीतर की कलात्मक ऊर्जा को जगाता है और जब वह उसके कारण हरवंश के मित्रों में आकर्षण का केन्द्र बनती है तो वह पुराने पारंपारिक पति की तरह अपने नियंत्रण में भी रखना चाहता है। एक स्थान पर निलिमा हरवंश कहती है – "तुम सिर्फ इस हीन भावना के शिकार हो" के लोग मुझे तुम से ज्यादा जानते हैं और उनमें जो बात होती है वह तुम्हारे विषय में न होकर मेरे विषयमें होती है। तुम्हें यह बात खाए जाती है कि लोग तुम्हारी चर्चा निलिमा के पति के रुप में करते है। तुम्हें डर लगता है कि अगर मेरा प्रदर्शन सफल हुआ तो लोग मुझे और ज्यादा जानने लगेंगे और तुम अपने को और छोटा महसूस करोंगे।"[102] परंतु यहाँ स्थिति

थोड़ी भिन्न है। हरबंश-निलिमा एक ही क्षेत्र के है। अकादमिक जगत से जुडे हुए, जबकि डॉ.शर्मा और मैत्रेयी के क्षेत्र अलग-अलग हैं। डॉ.शर्मा एम्स के एक माने हुए डॉक्टर हैं। अतः हरबंश जैसी हीनता ग्रंथी का भाव उनमें नहीं हो सकता। दूसरी बात यह है कि डॉ.शर्मा जब एम्स में जाते हैं तो स्थिति उस प्रकार की नहीं थी। बाद में मैत्रेयीजी जब एक सिध्धहस्त लेखिका हो जाती है और साहित्य जगत में अपना एक अलग वजूद बनाती है, तब ऐसी स्थिति आ सकती थी और कई बार आई है। परंतु डॉ.साहब के स्वभाव में ही एक गजब प्रकार की संतुलन शक्ति है कि मैत्रेयी के "गोड़फाधर" जैसे राजेन्द्र यादव को खूसट, बुड्ढा लोगों की बीबियों को बरगलानेवाला, औरतों को फंसानेवाला कहें और उनकी तस्वीरों से लड़ें लेकिन फिर उन्हीं राजेन्द्रयादव को "व्रजवासी दावत" दे। बीमार अवस्था में उनकी सेवामें पूरी तरह से तत्पर रहे, घर से बेदखल करने पर वह मकान में उनको पूरी सुख-सुविधा के साथ स्थापित करने का प्रयास करें। मैत्रेयी पुष्पा भले ही अपने पति महोदय के "जलकूकड़" कहती हो। परंतु मैत्रेयी पुष्पा को मैत्रेयी पुष्पा बनाने में उनका जो योगदान है उसे नकारा नहीं जा सकता। डॉ.शर्माकी उदारता और उनकी सोच की इससे बड़ी मिशाल और क्या हो सकती है? कि एक स्थान पर उन्होंने इकरार किया है – "जानम, जब गोष्ठियों में जाती है, बहार तो हमारा दुःख इंतिहा पर होता है, शक-संदेह ऐसे उठते हैं जैसे गैरमर्दों के आकार रुप हो और तुमसे अठखेलियाँ करते हों। बताओ कि इतना कष्ट पाकर में तुम्हें घर से निकाल देता हूँ?"[103] (पृ ३०५)

डॉ.सिद्धार्थ के प्रति मैत्रेयी का जो आकर्षण है उसके पक्ष में वह तर्क देती है – "नाचना मेरी इच्छा का नतीजा था, मेरी अपनी निजी इच्छा... नाच कर में उस गँवार शब्द के शहरी हथियार का साहस के साथ सामना कर रही

थी। जिसने अभी तक मुझे नीचा दिखाने के लिए अपना इस्तेमाल कराया है.... मैं ने अनुमति के लिए पति की ओर देखा नहीं। अपना निर्णय अपने हाथ में लिया, खतरों के बारे में सोचा नहीं।[104] इस प्रकार मैत्रेयी का यह कदम उसकी अपनी हीनताग्रंथि को दूर करने का था। वह अपनी नगरीय सहेलियों को बता देना चाहती थी कि वह भी एक आधुनिका की तरह किसी पर-पुरुष के साथ नृत्य कर सकती है। यहाँ मैत्रेयी ने डॉ.सिद्धार्थ के उन गुणों का भी जिक्र किया है, जिनके कारण उनका खिंचाव उनकी तरफ था – "डॉ.सिद्धार्थ मौसमों की रंगतों, हवा की सुगंधों में रचे-बसे लोकगीतों का अर्थ जानते हैं। यही था मेरे जुड़ाव का कारण।"[105] इस तरह मैत्रेयी पुष्पा की लोकगीतों वाली वह भूमिका ही उनको डॉ.सिद्धार्थ की ओर ले गई थीं। ये लगाव और खिंचाव कोई और रंग दिखावे उससे पहले ही डॉ.सिद्धार्थ विदेश चले जाते हैं।"[106]

"गुड़िया भीतर गुड़िया" में अनेकः अंतविरोध भी मिलते है। जैसे छोटी बेटी सुजाता जब किसी निम्नजाति के लड़के से विवाह करना चाहती है तो मैत्रेयी सोच - विचार मे पड़ जाती है। हाँलाकि बाद में वह उन दोनों को विवाह की अनुमति देती है और विवाह भी करवाती है। परंतु यहाँ भी वह ऐसा कर पाई है उसमें कहीं न कहीं डॉक्टर शर्माकी वह समझौतावाली नीति रही हैं। बिछियाँ और करवाचौथव्रत को तिलांजलि देनेवाली लेखिका अपनी मित्र इल्माना के बुर्के को मुस्लिम संस्कृति का हिस्सा मानकर वैध ठहराती है।"[107] इसे भी मैत्रेयी का वैवाहिक अंर्तविरोध ही कहना चाहिए। इसी तरह बांग्लादेश का युद्ध छिड़ जाने पर एम्स की कोलोनी में जब इल्माना "शक" के घेरे में आ जाती है और एम्स के कई लोगों द्वारा उनका "बायकाट" होता है तब मैत्रेयी देशकी सुरक्षा का हवाला देते हुए ऐसे नाजुक वक्त पर सावधान रहना और इल्माना से

दूर रहना ही श्रेयस्कर समझती है ।[108] इसे भी उनका वैचारिक अंतर्विरोध समझना चाहिए ।

पति से संबंध विच्छेद के विचार मैत्रेयी में कईबार आते है । परंतु राजेन्द्रयादव और मन्नू भंण्डारी के विच्छेद पर उनका दिल दहक उठता है । यथा – "यहाँ तो स्थिति और भी भयंकर ... वृद्धावस्था में अलग-अलग होना... आप दोनों में से एक कोई बीमार हो गया तो क्या होगा? सेवाशुश्रुषा ना बन पाए न सही, शहर में नौकर बहुत है । मगर घर में अपने सिवा दूसरे की उपस्थिति ही कम आस्वस्तिदायक नहीं होती ।"[109] इस प्रकार मैत्रेयी संबंध विच्छेद का विचार रखते हुए भी उस प्रकार का साहस नहीं कर पाई है । इसके पीछे भी शायद डॉ.साहब का ही हाथ है क्योंकि मन्नू-राजेन्द्र में कोई जुकने को तैयार नहीं था । दोनों के अपने – अपने अहम् थे । परंतु मैत्रेयी के प्रसंग में डॉ.साहब अपने अहम् की कईबार कुर्बानी दे देते है और स्थितिओं को संभाल लेते हैं । अन्यथा आत्मकथा के ऐसे कही प्रसंग और उदाहरण आए है जहाँ मैत्रेयी अपने वैवाहिक जीवन से असंतुष्टि का संकेत देती है। डॉ.सरजूप्रसाद मिश्र ने ऐसे ३ प्रसंगो का उल्लेख किया है – (1) माताजी मैं अब विधवा कब होंगी?" (पृ.288) (2) आज अपने ब्याह के पुराने फैसले पर दु:खी हूँ या ब्याह की वर्जनाओंको तोड़ने के नए संकल्प पर पस्ता रही हूँ । पत्नी की भूमिका अपनी कसावट में यंत्रणा दे रही है । (पृ.295) (3) इस आदमी से अलग ही हो जाऊँ... विवाह का गठबंधन चाहत का गला घोंट रहा है, दुहानेवाला यहाँ कोई नहीं । जब कि मैं दम दे रही हूँ... मेरे चाल-चलनकी तेजी और आकांक्षाओं के महत्व से तड़प उठते हैं... मैं इस आदमी को छोड़ ही दूँ, मेरे भीतर हूँक उठी ।" (पृ.293-294)

यहाँ डॉ.सरजूप्रसाद मिश्रकी इस टिप्पणी से सहमत हुआ जा सकता है – इसे सुख से दु:खी होना ही कहा जाएगा । यदि एक सामान्य परिवार की लड़की की शादी उज्जवल भविष्यवाले डॉ.शर्मा से न होती तो मैत्रेयी का जीवन क्या होता, इसे आसानी से समझा जा सकता है ।... वस्तुस्थिति यह है कि डॉ.शर्मा अपनी पत्नी के हितों की सुरक्षा के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते है । उसके साहित्यिक अभियानों को सफल बनाने में योगदान करते हैं ।"[110]

डॉ.परमानंद श्रीवास्तव ने "गुड़िया भीतर गुड़िया" की समीक्षा करते हुए लिखा है – "कईयों का मानना है कि "गुड़िया भीतर गुड़िया" रचना प्रक्रिया या संघर्ष के सफरनामे – सरीखी कृति है और सच-झूठ का कोलाज है ।"[111] डॉ.श्रीवास्तव के इस कथन की आलोचना करते हुए डॉ.सरजूप्रसाद मिश्र लिखते हैं – समीक्षक ने इस कथन की जाँच-पडताल न करते हुए उसे "आत्मकथा" से अधिक सिद्ध करने में अपनी सारी शक्ति लगा दी है । मैत्रेयी विवाह संस्था और पति के खिलाफ बहुत कुछ लिखती है । जो कुछ लिखा गया है, उसे सत्य की कसौटी पर कसने की जरुरत है मैत्रेयी विवाह संस्था तत्संबधी परम्पराओं और पति से विरोध का चित्कार - फुत्कार परख वर्णन करती है । मंगलसूत्र उनकी दृष्टि में "घटमल्ला" है । अपनी मित्र इल्माना से वह कहती है – हमें अपनी निष्ठा और पति के प्रति वफादारी को भूखे रखकर निभाना होता है । करवाचौथ के साथ पति भी उम्र का चक्कर तो बेकार लगा दिया है ।" (गु.पृ.63) एक अन्य स्थान पर लिखा है – "करवाचौथ के व्रत से ही पूरी साल ड़रा करती थी कि अब वह काल का दिन आने वाला है ।" (पृ.93 गु.) विश्वास न होने पर भी किसी रुढ़ि का अनुकरण क्रांतिकारिता नहीं दर्शाता ।"[112]

मेरे नम्र मत के अनुसार श्रीवास्तवजी यदि प्रस्तुत कृति को "आत्मकथा से अधिक सिद्ध करने में लगे हुए हैं तो उसे भी उपयुक्त नहीं कहा जा सकता। आत्मकथा आत्मकथा ही होनी चाहिए। न अधिक कम न ज्यादा। द्वितीयतः मैत्रेयी जी ने अपनी आत्मकथा में विवाह संस्था तथा परंपराओं के प्रति जो उद्‌गार निकाले हैं, वे उद्‌गार उनके जीवन के विविध प्रसंगो के परिप्रेक्ष में आए हैं, उन संदर्भो को काटकर उनको देखना अनुपयुक्त है। तृतीयतः मैत्रेयी जी ने कही भी अपनी "क्रांतिकारिता" के संदर्भ में कहा नहीं है। वस्तुतः मैत्रेयी जी एक बनी हुई लेखिका नहीं है। वह एक बनती हुई लेखिका है। अतः वैचारिक अंतर्विरोध रह सकते हैं। मैत्रेयीजी ने स्थान-स्थान पर अपनी भीरुता को भी बेपर्द किया है

"गुड़िया भीतर गुड़िया" शीर्षक प्रतीकात्मक है। विश्लेषण अनेक स्तरों पर हो सकता है। लेखन पूर्व की मैत्रेयी वह गुड़िया है जो रीति-रिवाजों और मान्यताओं की डोर से परिचालित होती रही है। उस गुड़िया का संचालन कभी माँ के द्वारा, कभी समाज द्वारा तो कभी पति द्वारा होता रहा है। परंतु इसी गुड़िया के भीतर से एक नयी गुड़िया ने जन्म लिया है, जो मैत्रेयी की लेखन के बाद की गुड़िया है। उसका संचालन लेखिका की लिखने की जद्दोजहद और लेखकीय संघर्ष और जीवानुभवों के द्वारा हुआ है।

निष्कर्ष :

दोनों अध्यायों के समग्रावलोकन से हम निम्नलिखित निष्कर्ष तक सहजतया पहुँच सकते हैं-

1. "कस्तूरी कुंडल बसै" लेखिका की आत्मकथा का प्रथम भाग है। "गुड़िया भीतर गुड़िया" आत्मकथा का दूसरा भाग है। प्रथम खण्ड़ की नायिका हमें कस्तूरी प्रतीत होती है। कस्तूरी का चरित्र अत्यंत सक्षम है। वह एक जीवटवाली संघर्षकामी जूझारु औरत है। यदि कोई बात वह

ठान लेती है तो ताल ठोककर वह उसके पीछे पड़ जाती है। इस तरह कई दृष्टियों से कस्तूरी का चरित्र हमें मैत्रेयी के चरित्र से भी अधिक सशक्त प्रतीत होता है।

2. मैत्रेयी में अनेक स्थानों पर कई अंतर्विरोध मिलते हैं। कस्तूरी में उस प्रकार के अंतर्विरोध कम हैं। कहना चाहें तो कह सकते हैं कि कस्तूरी का चरित्र नारीवादी चरित्र है जब कि मैत्रेयी का चरित्र नारीविमर्श वाली नारी का है।

3. कस्तूरी अपने जीवन के यौवनकाल से एक सशक्त नारीपात्र के रुप में उभरती है। मैत्रेयी में कस्तूरीवाली यह बात बहुत बाद में प्रगट होती है। लगभग प्रौढ़ावस्था में।

4. मैत्रेयीजी अपनी आत्मकथाओं के अध्यायों के जो शीर्षक देती हैं उनसे इस तथ्य की प्रतीति होती है कि उनके ऊपर कबीर का विशेष प्रभाव है। कबीरकी ऊलटबासियों में जो जटिलता और संलिष्टिता है उसी प्रकार की जटिलता और संलिष्टिता इस आत्मकथा में भी पायी जाती है।

5. मैत्रेयी पुष्पा की ये दोनों आत्मकथाएँ अपने समसामायिक जीवन को समझने के लिए "आईना" का काम करती है। विभिन्न समकालीन ऐतिहासिक संदर्भो की नोंध लेखिका ने ली है। कई स्थानों पर सम-सामायिक फिल्मों और गीतों का भी उल्लेख लेखिकाने किया है। इस प्रकार आत्मकथा में सहजता आयी है।

6. आत्मकथा लेखन की तुलना "नट कर्म" से हो सकती है। नट रस्सी पर चलने के लिए अपने हाथ में धारण किए बांस का उपयोग संतुलन साधने में करता है। ठीक उसी प्रकार मैत्रेयी की इन आत्मकथाओं में उनकी दृष्टि और विवेकने संतुलन का काम किया है। जिन बातों को स्वीकृत करने में किसी को झिझक हो सकती है। ऐसी बातों का खुलासा भी

लेखिका ने साहस-पूर्ण तरीके से किया है। इस प्रकार का लेखन किसी भी स्त्री के दांपत्य जीवन में खतरे पैदा कर सकता है, पर लेखिकाने उस प्रकार के खतरों को उठाया है।

7. मैत्रेयी के उपन्यासों और कहानियों की भाँति ये आत्मकथाएँ भी इस बात का प्रमाण है कि सशक्त साहित्य के लिए लेखक या लेखिका को कहीं-न-कहीं संघर्ष - टकराहट का सामना करना ही पड़ता है। इन से बचकर जो लिखा जाता है। उस प्रकार के "सुष्टु सुष्टु" प्रकार के लेखन में कोई दम नहीं होता।

8. "गुड़िया भीतर गुड़िया" आत्मकथा में हमें मैत्रेयी के कई उपन्यासों और कहानियों की पृष्ठभूमि उपलब्ध होती है। अतः उन उपन्यासों और कहानियों को सही परिपेक्ष्य में समझने के लिए आत्मकथा एक अत्यंत आवश्यक स्त्रोत ग्रंथ का कार्य करती है।

संदर्भसंकेत

1. गुड़िया भीतर गुड़िया : मैत्रेयी पुष्पा : निवेदन से : पृ. ७
2. दृष्टव्य : वही : पृ. २०
3. दृष्टव्य : वही : पृ. ४१
4. दृष्टव्य : अलग - अलग वैतरगी पृ. : ५
5. From :- An interview of Mahesh Bhatt : Times of India : Baroda Times – Page : 8 : 22/8/11
6. Times of India : 26/8/11 : They said it : Quotation from Lady Gaga – A Pop Singer : Page No. 12
7. दृष्टव्य : गुड़िया भीतर गुड़िया – मैत्रेयी पुष्पा – पृ. ६४
8. दृष्टव्य :वात्सायन कामसूत्र और An Abz of love Stelen and Hingë
9. दृष्टव्य : गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ७६
10. दृष्टव्य : गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ६१
11. तुलनीय हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिलाओं का चित्रण : रोहिणी अग्रवाल
12. दृष्टव्य :बात बोलेगी : संजीव : हंस
13. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ८३
14. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ८०
15. दृष्टव्य :वही : पृ. ९१
16. दृष्टव्य :वही : पृ. १११
17. दृष्टव्य : गुड़िया भीतर गुडिया : पृ. ११६
18. वही : पृ. ११०
19. दृष्टव्य :वही : पृ. १२३
20. दृष्टव्य :वही : पृ. १०३

21. See : Times of India : P : 9
22. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १२८
23. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १३७
24. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १४०
25. वही : पृ. १४२
26. वही : पृ. १५५
27. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १६१
28. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १७८
29. वही : पृ. १७७
30. वही : पृ. १७९
31. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १७३
32. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १८३
33. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १८१
34. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १८८
35. वही : पृ. १८९
36. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १९०
37. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १९१
38. वही "" : पृ. १९१
39. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १९६
40. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. १८९
41. वही : पृ. २००
42. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २०४
43. दृष्टव्य : वही : पृ. २०५
44. दृष्टव्य : वही : पृ. २०५

45. दृष्टव्य : वही : पृ. २०६

46. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २०७

47. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २०९

48. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २१०

49. दृष्टव्य : वही : पृ. २०९ से २११

50. दृष्टव्य : वही : पृ. २०९

51. दृष्टव्य : वही : पृ. २२०

52. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २२२

53. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २२१

54. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २२२

55. वही :पृ.२२३

56. दिनांक - ३/२/१२ (गुजरात रिफाइनरी बड़ौदा में मैत्रेयी द्वारा दिया गया वकतव्य)

57. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २३५

58. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २४७

59. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २४५

60. टिप्पणी १३४ के अनुसार

61. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २४०

62. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २४०

63. वही : पृ. २४६

64. वही : पृ. २५२

65. वही : पृ. २७२

66. ज्योर्स कैरी, A Writer at work, first series (1958) P : 60

67. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २५४

68. वही : पृ. २५७

69. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २६५

70. दृष्टव्य : वही : पृ. २७३

71. प्रोफेसर पारूकांत देसाई के एक व्याख्यान से।

72. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. २७७

73. दृष्टव्य :वही : पृ. २७९

74. दृष्टव्य :वही : पृ. २९९

75. दृष्टव्य :वही : पृ. २९३

76. दृष्टव्य :वही : पृ. ३०२

77. दृष्टव्य :वही : पृ. ३०३

78. वही : पृ. ३०६

79. हंस नवम्बर : २००० के संपादकीय से।

80. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ३०९

81. See : An ABZ of Love : Dr. Hinge and Sten Hegelar

82. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ३०८-३०९

83. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ३११

84. दृष्टव्य :गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ३३१

85. वही : "" "" : पृ. ३३१

86. वही : "" "" : पृ. ३३६

87. वही : "" "" : पृ. ३३६

88. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ३३७

89. वही : पृ. ३३४

90. वही : पृ. ३४१

91. वही : पृ. ३४९

92. वही : पृ. ३४९

93. वही : पृ. ३५०

94. वही : पृ. ३५२

95. वही : पृ. ३३४

96. वही : पृ. ३३

97. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ८१

98. हंस : "विभूति नारायण राय की टिप्पणी पर प्रकाशित अंक" :

99. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ३१६

100. वही : पृ. ३१६

101. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएँ : डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र : पृ. १२१

102. अंधेरे बंध कमरे : मोहन राकेश : पृ. ३४५

103. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ३०५

104. वही : पृ. १४

105. वही : पृ. १४

106. गुड़िया भीतर गुड़िया : पृ. ६३-६६

107. वही : पृ. ८३

108. वही : पृ. २९९

109. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएँ : डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र : पृ. १२३

110. वही : पृ. १२२

111. वही : पृ. १२२

112. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएँ : डॉ. सरजूप्रसाद मिश्र : पृ. १२२